सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना

ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE
सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

PART - 5

JAIN COSMOLOGY(सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

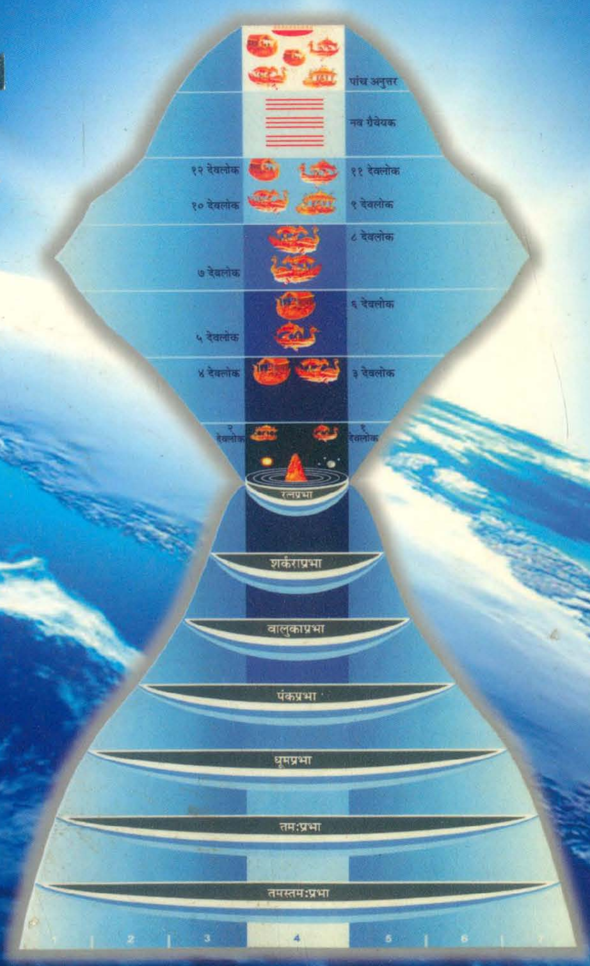
पांच अनुत्तर
नव ग्रैवेयक
१२ देवलोक
११ देवलोक
१० देवलोक
९ देवलोक
८ देवलोक
७ देवलोक
६ देवलोक
५ देवलोक
४ देवलोक
३ देवलोक
२ देवलोक
१ देवलोक
रत्नप्रभा
शर्कराप्रभा
वालुकाप्रभा
पंकप्रभा
धूमप्रभा
तमःप्रभा
तमस्तमःप्रभा
1
2
3
4
5
6
7

❁ पावन प्रेरणा ❁

प. पू. दीक्षा दानेश्वरी आ. श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा.
प. पू. प्रवचन प्रभावक आ. श्री रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा.

॥ ऐँ नमः ॥ ॥ नमोऽस्तु तस्मै तव शासनाय ॥

॥ श्री तपागच्छाचार्य श्री प्रेम-भुवनभानु-जयघोष-जितेन्द्र-गुणरत्न-रश्मिरत्न-हीररत्नविजय सद्‌गुरूभ्यो नमः ॥

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना

ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE

सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY(सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

PART - 5

दिव्याशीर्वाद

प. पू. सिद्धांत महोदधि आ. श्रीमद्विजय प्रेमसूरीश्वरजी म. सा.

प. पू. युवाशिबिर आद्यप्रणेता आ. श्रीमद्विजय भुवनभानुसूरीश्वरजी म. सा.

प. पू. मेवाडदेशोद्धारक आ. श्रीमद्विजय जितेन्द्रसूरीश्वरजी म. सा.

शुभाज्ञा-आशिष

प. पू. सुविशाल गच्छाधिपति गीतार्थमूर्धन्य पूज्यपाद

आचार्यदेव श्रीमद्विजय जयघोषसूरीश्वरजी महाराजा

पावन प्रेरणा

प. पू. दीक्षा दानेश्वरी आ. श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा.

प. पू. प्रवचन प्रभावक आ. श्री रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा.

प. पू. कविराज मुनि श्री हीररत्न वि.म.सा.

संशोधक

प. पू. वर्धमान तपोनिधि आ.श्री भूवनभानुसूरीश्वरजी म.सा. के

शिष्यरत्न प.पू. पंन्यासप्रवरश्री पद्मसेन वि.म.सा.

प. पू. शासन प्रभावक आ. श्री रत्नाकरसूरीश्वरजी म.सा. के

शिष्यरत्न प. पू. पंन्यासप्रवरश्री रत्नज्योत वि.म.सा.

संकलक-संयोजक-संपादक

मुनि चारित्ररत्नविजय...

ग्रंथ नाम

THE REAL UNIVERSE

(सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड)

ग्रंथ विषय

जैनधर्म संबंधी खगोल-भूगोलादि की विस्तृत सचित्र जानकारी

ग्रन्थ की विशेषताएँ

- ८५० से अधिक पृष्ठों में विस्तारित.....
- पांच विभागों में विभक्त एवं आठ द्वारों से सुशोभित हिन्दी आवृत्ति....
- जैनधर्म से संबंधित भूगोल-खगोलादि का सचित्र वर्णन....
- २०० लेखों के ज्ञानार्जन में सहायक ४०० से अधिक थ्रीडी बहुरंगी चित्रों का विशाल संग्रह........
- ३०० से अधिक आगम - प्रकरण ग्रंथों पर आधारित....
- १५० पृष्ठों में विस्तारित 'जानने जैसी भूमिका' रूप ''परिशिष्ट''....
- १०० से अधिक प्राचीन चित्रों की प्रतिकृतियों का अनोखा संकलन....
- तारातंबोल जैसी प्राप्य-अप्राप्य नगरियों का उल्लेख....
- प्राचीन-अर्वाचीन ग्रन्थकारों द्वारा लिखित चौदह राजलोक संबंधित पद्यात्मक भाषा में स्तुति-स्तवन-सज्झाय तथा पूजा की ढालों का अलौकिक ''कृतिसंग्रह''...

आवृत्ति - प्रतिकृति

आवृत्ति - प्रथम

प्रतिकृति - २०००

दिव्याशीर्वाद

सिद्धांतमहोदधि आ. श्री प्रेमसूरीश्वरजी म.

युवाशिबिर प्रणेता आ. श्री भुवनभानुसूरिजी म.

मेवाडदेशोद्धारक आ. श्री जितेन्द्रसूरिजी म.

शुभाज्ञा-आशिष

सुविशाल गच्छाधिपति गीतार्थमूर्धन्य

पूज्यपाद आचार्यदेव श्री जयघोषसूरिजी महाराजा

पावन प्रेरणा

प.पू. दीक्षादानेश्वरी आ.श्री गुणरत्नसूरिजी म.सा.

प.पू. प्रवचन प्रभावक आ.श्री रश्मिरत्नसूरिजी म.सा.

प.पू.मु. श्री हीररत्न वि.म.सा.

पदार्थ संशोधक

प.पू. वर्धमान तपोनिधि आ.श्री भुवनभानुसूरिजी म.सा. के शिष्यरत्न प.पू. पं.श्री पद्मसेन वि.म.सा.

प.पू. शासन प्रभावक आ. श्री रत्नाकरसूरिजी म.सा. के शिष्यरत्न प.पू.पं. श्री रत्नज्योत वि.म.सा.

प्रुफ संशोधक

प.पू.पं.श्री धर्मशेखरविजयजी म.सा.

प्रो. रमेशभाई बी. शाह (अम.)

कमलेशभाई पुरोहित (सिरोही)

अभिषेकभाई वकील (इंदोर)

संकलक - संयोजक - संपादक

मुनि चारित्ररत्नविजय...

ग्रंथ डिझाईनर

ॐकार ग्राफिक्स

पियुषभाई के. शाह अहमदाबाद- (गुज.)

टाईपिंग एवं मुद्रण

नवरंग प्रिन्टर्स

अपूर्वभाई शाह अहमदाबाद - (गुज.)

फोटोग्राफी पिक्चर डिझाईनर

जैनिझम ओनलाईन

श्री हितेशभाई शाह (नवसारी)

प्रकाशक

जिनगुण आराधक ट्रस्ट

राजदा बिल्डीग, ओ.नं. ९/११, दूसरा माला,

जूनी हनुमान क्रोस लेन, काल्बादेवी रोड, मुंबई - ३

प्रकाशन वर्ष

वी.सं.२५४१, वि.सं. २०७१, ई.सं. २०१५

विमोचन ता. ३१-५-२०१५, तिथि जेठ सुद १३

ग्रंथविभाग एवं पृष्ठ

(१) 67+१३३=२००

(२) 25+१६७=१९२

(३) 27+१६७=१९४

(४) 23+१७३=१९६

(५) 14+५२=६६

मूल्य

पांच भाग रूप पूरे सेट का

२५००/-

प्राप्ति स्थान

अहमदाबाद

शाह बाबुलालजी सरेमलजी
“सिद्धाचल” सेन्ट एन्ड स्कूल
के सामने, हीराजैन सोसा.,
साबरमती, अहमदाबाद - ५
(M) 09426585904
(O) 079-22132543
(R) 079-27505720

पालीताणा

सुघोषा कार्यालय
सोमचंद डी. शाह
तलेटी रोड,
पालीताणा

मुकेशभाई
(M) 09898332245

शंखेश्वर

वंदना बुक स्टोर्स
यात्रिक भवन के पास,
शंखेश्वर तीर्थ,
गुजरात
(M) 09374169618
(M) 09429297740
(M) 09904786962

सुरत

अशोकभाई एम. नागोत्रा
५०१, समवसरण ऐपार्टमेन्ट
लाल बंगला के सामने,
अठवालाईन्स, सुरत
(M) 09825132455
(M) 09428870903
(R) 0261-2669933

मुंबई

मांगीलालजी पारेख
NAKODA CREATION
Shop no. 1, Kshirsagar apt,
opp. Maltibai Hospital,
St.John School Road,
THANE (west)
(M)09773329503,
(M)09324286481
(O)022-25309655

पुना

मांगीलालजी सोलंकी
श्री सिद्धाचल सोसायटी,
१८-बी, गुलटेकडी फ्लेट,
एफ-१३, पुणे -411037
(M) 09822271372
(R) 020-24265006

हुबली

AMBAR SAKARIYA
156, Kundan Kunj
Arihant Nagar,
Kushgal Road,
Keshwapur,
HUBLI-580023
(M) 09886217673

चेन्नाई

पारस डी. जैन
c/o, KOLORS KREATIONS
Shringar Plaza, # 359
Mint Street, Sowcarpet,
Opp. Vardhan Complex,
CHENNAI - 600079
(M) 09840208075
(M) 09884553007
(O) 044-23468276

बैंगलोर

एम. चंपालाल
No.531/532, O.T.C.Road,
1st floor,
Near Balpet Circle,
BANGALORE- 560002
(M) 09342727606
(M) 09844760139

दिल्ली

मोतीलाल बनारसीदास
४१, U.A., बंगला रोड,
दिल्ली - ११०००७
Email-mlbd@mlbd.com

रवि जैन
(M) 08800666090
(O) 011-23851985

कायमी संपर्क सूत्र

अरुणभाई - साबरमती
09427522101,
09408252201

मोहितभाई गीरधरनगर
अहमदाबाद
09426707301

ACHARYA SRI KAILASSAGARS [illegible] MANDIR
Koba, Gandhinagar 382 009
Phone : (079) 23276252, 23276204-0

प्रकाशकीय निवेदनम्

जैनधर्म वो अनादिकाल से चला आ रहा है एवं अनादिकाल तक यह अनंतानंत आत्माओ को मोक्ष मुक्ति में जाने के लिए निमित्त बन रहा है तथा जैनशास्त्रो (जिनागमों) में विश्व संबंधि संपूर्ण विश्व व्यवस्था (ब्रह्मांड का स्वरूप) असंख्य द्वीप-समुद्रो से व्याप्त मध्यलोक, खगोलीय (आकाश संबंधी) सूर्य-चंद्र-ग्रह-नक्षत्र एवं तारा इत्यादि, ऊर्ध्वलोक के रूप में रहे हुए १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तरादि, अधोलोक के रूप में ७ नरको की व्यवस्था, भवनपति-व्यंतर-वाणव्यंतरादि देवो की बाते और प्रकीर्णक रूप में आये हुए जैनशासन के छुटे छुटे पदार्थों की सूक्ष्म एवं स्थूलादि सर्व ठोस हकिकतों को बताने में आई है जो संपूर्ण वैज्ञानिक एवं तर्कबद्ध है।

इस ब्रह्मांड का और उसमें रहे हुए पदार्थों का जो सच्चा स्वरूप बताते है उसे जैनदर्शन में "द्रव्यानुयोग" कहा जाता है। उन द्रव्यों के गुणों से होती हुई गिनती को "गणितानुयोग" कहा जाता है। इन द्रव्यो को परखकर मोक्ष प्राप्त करने का जो भव्य पुरुषार्थ किया जाता है उसे "चरणकरणानुयोग" कहा जाता है एवं जो उस चरणकरणानुयोग को साधकर मोक्ष में चले जाते है उस विशिष्ट आत्मसाधकों की कथा को "धर्मकथानुयोग" कहा जाता है।

प.पू. त्रिशताधिक दीक्षा दानेश्वरी आचार्य श्री विजय गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा. तथा प.पू. प्रवचन प्रभावक आचार्य श्री विजय रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा की पावन प्रेरणा को झिलकर (ग्रहणकर) प.पू. मुनिराज श्री हीरत्नविजयजी म.सा. के शिष्यरत्न मुनिराज श्री चारित्ररत्नविजयजी म.सा.ने Jain Cosmology (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) नामक ग्रंथ का सफल संपादन कर जिनशासन के चरणों में अब उनके द्वारा दुसरे कदम स्वरूप THE REAL UNIVERSE (सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड) नाम का ग्रंथ जो तैयार किया गया है वह जैनशासन के चरणों में एक अद्‌भूत ग्रंथ की भेंट होगी... जो वस्तुतः बहुत ही उपयोगी एवं अनुमोदनीय है। ऐसे अनेकानेक लोकभोग्य ग्रंथो का सर्जन मुनिराजश्री के हाथों होते रहे....ऐसी भावभरी विनंती....

THE REAL UNIVERSE (सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड) ग्रंथ की प्रथम आवृत्ति का चतुर्विध श्री संघ के चरणों मे प्रकाशन करते हम आनंद की अनुभूति कर रहे है... तथा आधुनिक विज्ञान कि कल्पित बातों में अंधश्रद्धा धारण करनेवाले सर्वजन इस ग्रंथ को पढ़कर ब्रह्मांड (विश्व) के सच्चे स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर उसका उपयोग स्व - पर की आत्मा के उद्धार के लिए करे...

ऐसी अंतर की भावना के साथ ही....

लि. जिनगुण आराधक ट्रस्ट

अंतर की अटारीयों से...

श्री जिनशासन को प्राप्त पुण्यवान आराधक आत्मशुद्धि को केन्द्र में रखकर सर्व धर्म क्रियाएँ करता है। कहाँ जाता है कि जिस अनुष्ठान के द्वारा मोहनीय कर्म का क्षयोपक्षम रूप अंतरंग भावशुद्धि न हो तो वह अनुष्ठान भावक्रिया रूप नहीं बन सकता । इसलिए ही औदयिकभाव की परवशता में से उत्पन्न हुई आत्मा की मलिनता को लक्ष्य में रखकर शुद्धि की प्राप्ति हेतु जागृत होकर प्रवृत्ति करना वहीं आराधना का परमार्थ है। अर्थात, शुद्धि के सर्वश्रेष्ठ स्थान पर पहुंचे हुए आत्मतत्त्व (सिद्धपद) को आदर्श रूप बनाकर जीवन-शक्तियों को तदनुसार प्रयत्नों में आराधक पुण्यात्माओं को ज्यादा विश्वास होता है । इतना ही नहीं, परंतु इस प्रकार की भूमिका और यथोत्तर विकास के पंथ को बतानेवाले तथा उसके क्रमिक उपायों को दर्शानेवाले श्री तीर्थंकर परमात्माओं के प्रति अत्यधिक बहुमानभरी स्तवना, स्तुति, आत्मतत्त्व निवेदनादि करने मुमुक्षु आत्मा सतत (निरंतर) प्रवृत्त होता है । इस तरह उच्चकोटि के विशिष्ट पुण्यात्माओं के हृदय में से परमात्मा एवं उनके शासन के प्रति स्वयंभू - अखंड भक्तिगंगा प्रगट हुई थी एवं वर्तमान में भी हो रही है। प्राचीन काल में संस्कृत-प्राकृत-देशी-अपभ्रंशादि तो उस उस समय में मुख्यतया बोले जानेवाली भाषा में अनंतानंत उपकारी श्री अरिहंत-तीर्थंकर-सर्वज्ञ परमात्मा के भाववाही स्तवनों की रचना परमार्थ में निष्ठावाले महापुरुषों के द्वारा होती ही थी।

अंतिम विक्रम की बारहवी शताब्दि के उत्तरार्ध से वर्तमान की गुर्जर भाषा का विकास शुरू हुआ, परिणामतः सोलहवी शताब्दी में कुछ ठोस स्वरूप में नियत किए हुए गुर्जर भाषाने सत्रहवी शताब्दि के प्रारंभ मधुरता-भरा स्वरूप धारण किया और उस समय भाषा की नवीनता एवं शुद्धिकरणता के गुण का लाभ लेकर उस वक्त के महापुरुषों के द्वारा परमात्मा की भक्ति की तरफ सामान्य जनता को अपने जैनधर्म में स्थिर करने हेतु अनेक प्रकार की चौविशीयाँ एवं प्रकीर्णक स्तवनो तथा पूजा की ढालों की रचनाए की हुई।

वर्तमानकालीन इतिहास के उपलब्ध साधनों के आधार से यह भी जानने को मिला है कि... ''गुर्जर भाषा की आद्यजननी रूप देश्य अपभ्रंश भाषा में सर्व प्रथम कृति स्वरूप वि.सं. १२४१ में प.पू. आचार्य श्री शालीभद्रसूरीश्वरजी महाराजा द्वारा रचित ''भरत बाहुबली रास'' गिना जाता है ''। उसके बाद उत्तरोत्तर भाषाकिय सुधारे होते गये । भक्त कवि नरसिंह के समय बाद गुर्जर भाषा नें एक नियत स्वरूप धारण किया। अर्थात् उस गुर्जर भाषा के माध्यम से अपने परमोपकारी गीतार्थ दीर्घदर्शी आचार्यादि मुनि भगवंतो द्वारा श्री वीतराग प्रभु के अवर्णनीय गुणों की स्वतना - चोविशीओं और पदों द्वारा करने लगे... जिसके अवलंबन से मुमुक्षु पुण्यात्माओ भूले हुए आत्मस्वरूप को बतानेवाले महान, उपकारी तीर्थंकर भगवंतो का अत्यद्‌भुत उदात्ततम लोकोत्तर गुणों को अपनी अपनी भाषा में व्यक्त करने के रूप भावोल्लास पोषक रूप स्तवनादि को आत्मशुद्धि का अनन्य साधन रूप अपनाते गये । ऐसे स्तवन साहित्य निरंतर विक्रम की पंद्रहवी शताब्दि के उत्तरार्ध तक जिनशासन में सर्जन होते गये।

सत्रहवी शताब्दि के प्रारंभ में इन स्तुति - स्तवन - सज्झाय का सर्जन पूरबहार में खीला और अढारहवी - उन्नीसवी एवं बीसवी शताब्दि में भी समृद्ध बनता गया । ऐसा स्तवन साहित्य भी उत्तम प्रकार से टिका रहकर अनेक भव्यात्माओं को उपकारी बनता आया....।

इन गीतार्थ महापुरुषों के द्वारा नहीं के एकमात्र परमात्मा के ही संबंधी रचनाए हुई है परंतु जिनशासन के प्रायः सभी पदार्थो पर पद्यात्मक भाषा में कलम चली हुई है..... जैसे की जीव के ५६३ भेद, १४ गुणस्थानक, भरहेसर सज्झाय के महापुरूषों एवं महासतीयों पर उनकी कथाए, सिद्ध स्वरूप की अवस्था, ६ लेश्या, ८ कर्म, बाह्य-अभ्यंतर तप, ४ प्रकार के कषाय, ४ प्रकार के ध्यान... इत्यादि... और इसी ४ प्रकार के ध्यान के अंतर्गत आया हुआ तीसरा धर्मध्यान और उस धर्मध्यान के चौथे प्रकार स्वरूप संस्थानविचय.... ! बस ! इसी संस्थानविचय का एक अणमोल संग्रह याने यह आपको हाथों मे रहा हुआ ''कृति संग्रह'' रूप आठवां द्वार..... ।

जिसमें आपश्री पायेंगे... जिनशासन का प्राप्त धुरंधर गीतार्थ महापुरुषों के द्वारा एक मात्र सर्वज्ञ कथित जो संस्थान विचय अर्थात् १४ राजलोक रूप त्रिलोक संबंधी सर्व बातों का पद्यात्मक भाषा में (अर्थात् स्तुति - स्तवन - सज्झाय रूप में...) संग्रह...

इस पद्यात्मक ''कृति संग्रह'' के अंतर्गत दिये गये संस्थानविचयात्मक स्तुति-स्तवन-सज्झाय एवं पूजा की ढालों का पठन-पाठन कर भव्यात्माएं शीध्रतया मुक्ति को प्राप्त करे...... इसी शुभाशय के साथ...

गुरुगुणरश्मिहीरपादपद्मरेणु
मुनिचारित्ररत्नविजय

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना

ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE

सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

THE REAL UNIVERSE
सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड
ILLUSTRATED
PART - 1
PART - 2
PART - 3
PART - 4
PART - 5

ग्रंथ विभागीकरण एवं परिचय

यह ग्रंथरत्न एक सामान्य पुस्तक के रूप में ही प्रकाशित नहीं हो रहा है... परंतु एक प्रकरण ग्रंथ - अभ्यासिक ग्रंथ के स्वरूप में प्रकाशित हो रहा है जिसमें सर्वज्ञ तीर्थंकर भगवंतों के द्वारा बताया गया विश्व क्या है ? उसकी व्यवस्था कैसी है ? तथा ऊर्ध्व-अधो-मध्य (तीर्छा) लोक में क्या क्या रहा हुआ है ? और तो और जैनशासन की जनरल फिलोसोफी एवं मान्यताएँ तथा जैनशासन के विशिष्ट पदार्थ क्या है ? इत्यादि बहुत सारी जानकारी से परिपूर्ण यह एक श्रेष्ठ ग्रंथ है.... इसलिये बाह्य दृष्टि से देखने जाये तो जैसा आकर्षण VIP अथवा 3D के ग्रंथादि में होता है वैसा आकर्षण इस ग्रंथ में देखने को शायद नहीं भी मिलेगा वह स्वाभाविक है फिर भी एक प्रयत्न इस तरफ किया है अतः अभ्यंतर दृष्टि से देखने जाये तो यह ग्रंथ वाचकवर्ग (अभ्यासुवर्ग) के लिये यह अनेकानेक प्रकारो से उपयोगी होगा... बस ! इसी अभ्यर्थना के साथ......

संपादक - मुनि चारित्ररत्नविजय....

THE REAL UNIVERSE (PART - 1)

(द्वार - १) लोक विभाग

(1) श्री २४ तीर्थंकर भगवान (2) श्री पंच परमेष्ठी के१०८ गुण..... (3) क्या ईश्वर जगत का निर्माणकर्ता हो सकता है ?.... (4) जैनधर्म वह विश्वधर्म है..... (5) १४ राजलोक रूप विश्व-व्यवस्था..... (6) १४ राजलोक का यथार्थ स्वरूप..... (7) १४ राजलोक तथा तीन लोक के मध्यस्थान..... (8) ८ रुचक प्रदेश अर्थात् समभूतला..... (9) षड्द्रव्यात्मक लोक (विश्व)..... (10) धर्मास्तिकाय..... (11) अधर्मास्तिकाय..... (12) आकाशास्तिकाय (लोकाकाश)..... (13) आकाशास्तिकाय (अलोकाकाश)..... (14) काल द्रव्य..... (15) पुद्‌गल द्रव्य..... (16) जीव द्रव्य..... (17) षड्द्रव्यों के २३ द्वार.....★ लोक स्वरूप चिन्तन से मानसिक शान्ति....

(पेज नं. १से ३५)

(द्वार - २) मध्यलोक

(18) जैन गणितानुसार एक योजन के माईल कितने होते है ?..... (19) मध्यलोक का स्वरूप..... (20) मध्यलोक का मध्यद्वीप = जंबूद्वीप..... (21) जंबूद्वीप की जगती = किल्ला..... (22) भरत क्षेत्र..... (23) भरत क्षेत्र के मध्यखंड की विशेष जानकारी..... (24) ऋषभकूट पर्वत की विशेष जानकारी..... (25) भरत क्षेत्र में समुद्र कहाँ से आये...? (26) दीर्घ वैताढ्यपर्वत..... (27) जंबूद्वीप के ७ महाक्षेत्र..... (28) जंबूद्वीप के ६ वर्षधर पर्वत..... जंबूद्वीप के ६ महाद्रह.... (29) जंबूद्वीप अंतर्गत लघुहिमवंत पर्वत का वर्णन..... (30) लघुहिमवंत पर्वत पर पद्मद्रह सरोवर..... (31) जंबूद्वीप अंतर्गत हिमवंत क्षेत्र..... (32) जंबूद्वीप अंतर्गत महाहिमवंत पर्वत..... (33) जंबूद्वीप अंतर्गत हरिवर्ष क्षेत्र..... (34) जंबूद्वीप अंतर्गत निषध पर्वत (पार्ट - २) ..... (35) महाविदेह क्षेत्र..... (36) महाविदेह क्षेत्र..... (37) १ लाख योजन प्रमाण महाविदेह क्षेत्र कैसे होता है ?... (38) महाविदेह क्षेत्र अंतर्गत १६ वक्षस्कार पर्वत..... (39) महाविदेह क्षेत्र अंतर्गत १२ अन्तर नदियाँ.....(40) महाविदेह क्षेत्र में आये हुए वनमुख का दृश्य..... (41) महाविदेह क्षेत्र में रहे हुए ४ गजदंत पर्वत..... (42) महाविदेह क्षेत्र में रहे हुए ४ गजदंत पर्वत..... (43) महाविदेह क्षेत्र अंतर्गत उत्तरकुरु क्षेत्र..... (44) उत्तरकुरु क्षेत्र अंतर्गत यमक-समक पर्वत..... (45) उत्तरकुरु क्षेत्र अंतर्गत ५ लघुद्रह..... (46) उत्तरकुरु क्षेत्र अंतर्गत १०० कंचनगिरि पर्वत..... (47) उत्तरकुरु क्षेत्र में आया हुआ जंबूवृक्ष (पार्ट - १) ..... (48) उत्तरकुरु क्षेत्र में आया हुआ जंबूवृक्ष (पार्ट - २) ..... (49) महाविदेह क्षेत्र अंतर्गत देवकुरु क्षेत्र..... (50) जंबूद्वीप में रहा हुआ मेरुपर्वत..... (51) मेरुपर्वत के चारों तरफ रहा हुआ भद्रशालवन..... (52) मेरुपर्वत पर आया हुआ नंदनवन (पार्ट - १)..... (53) मेरुपर्वत पर आया हुआ नंदनवन (पार्ट - २) ..... (54) मेरुपर्वत पर आया हुआ सौमनसवन..... (55) मेरुपर्वत पर आया हुआ पाण्डकवन(पार्ट - १) ..... (56) मेरूपर्वत पर आया हुआ पाण्डकवन(पार्ट - २) ..... (57) मेरुपर्वत पर आई हुई चूलिका..... (58) जंबूद्वीप अंतर्गत नीलवंत पर्वत..... (59) जंबूद्वीप अंतर्गत रम्यक् क्षेत्र और रुक्मि पर्वत.... (60) जंबूद्वीप अंतर्गत हिरण्यवंत क्षेत्र..... (61) जंबूद्वीप अंतर्गत शिखरी पर्वत..... (62) जंबूद्वीप का ऐरावत क्षेत्र..... (63) जंबूद्वीप में रहे हुए वृत्त (गोल) पदार्थों का यंत्र.....★ **THE REAL UNIVERSE** ग्रंथ के आधार ग्रंथों की सूची (द्वार १ से ५)

(पेज नं. ३६ से १३३)

THE REAL UNIVERSE (PART - 2)

(64) इस अवसर्पिणी काल के १२ चक्रवर्ती (65) चक्रवर्ती के १४ रत्न... (७ एकेन्द्रिय रत्न)....(पार्ट - १) (66) चक्रवर्ती के १४ रत्न... (७ एकेन्द्रिय रत्न)....(पार्ट - २) (67) चक्रवर्ती के १४ रत्न... (७ एकेन्द्रिय रत्न)....(पार्ट - ३) (68) चक्रवर्ती के १४ रत्न... (७ पंचेन्द्रिय रत्न)....(पार्ट - ४) (69) चक्रवर्ती के १४ रत्न... (७ पंचेन्द्रिय रत्न)....(पार्ट - ५) (70) चक्रवर्ती के नवनिधान = नवनिधि..... (पार्ट -१) (71) चक्रवर्ती के नवनिधान = नवनिधि..... (पार्ट -२) (72) वासुदेव के ७ रत्न..... (73) कोटिशिला संबंधी विशेष जानकारी..... (74) ६३ शलाकापुरुष और अन्य महापुरुषो का क्रमादि..... (75) श्री प्रभुवीर के ११ गणधरों का जीवन परिचय..... (76) लवणसमुद्र..... (77) लवणसमुद्र अंतर्गत गौतमद्वीप..... (78) लवणसमुद्र अंतर्गत ५६ अंतर्द्वीप..... (79) लवणसमुद्र के तीन मागधादि तीर्थ..... (80) गोतीर्थ और जलवृद्धि का दो तरफ से दृश्य..... (81) जैन दृष्टि से ज्वार-भाटा का कारण..... (पार्ट - १) (82) जैन दृष्टि से ज्वार-भाटा का कारण..... (पार्ट - २) (83) धातकीखंड..... (84) कालोदधि समुद्र..... (85) पुष्करवरार्ध द्वीप..... (86) मानुषोत्तर पर्वत..... (87) अढाईद्वीप..... (88) अढाईद्वीप में रहे हुए शाश्वत पदार्थों का यंत्र..... (पार्ट - १) (89) अढाईद्वीप में रहे हुए शाश्वत पदार्थों का यंत्र..... (पार्ट - २) (90) अढाईद्वीप में शाश्वत चैत्य-प्रतिमाओं का वर्णन..... (91) तीनों लोक में रहे हुए शाश्वत प्रासादादि का यंत्र .....(पार्ट -१) (92) तीनों लोक में रहे हुए शाश्वत प्रासादादि का यंत्र .....(पार्ट -२) (93) सात द्वीप-सात समुद्र की बातें क्या सच है ?..... (94) नंदीश्वरद्वीप..... (95) श्री नंदीश्वरद्वीप विषयक किंचित् वर्णन..... (96) नंदीश्वरद्वीप में आया हुआ अंजनगिरि.....

(97) नंदीश्वरद्वीप के दधिमुख पर्वत और रतिकर पर्वत..... (98) कुंडलद्वीप की विशेष जानकारी..... (99) रुचकद्वीप..... (100) तिर्च्छालोकवर्ती क्रमशः द्वीप-समुद्र स्थापना..... (101) समस्त द्वीप-समुद्रों का आकार तथा प्रमाण..... (102) प्रत्येक समुद्रवर्ती जल का स्वाद और मत्स्यादि का प्रमाण..... (103) तिर्च्छालोक में रहे हुए द्वीप-समुद्रों का प्रमाणादि..... (104) तमस्काय का स्वरूप..... (105) ज्योतिष चक्र का स्वरूप..... (106) ज्योतिष चक्र के विमानों का आकारादि..... (107) सूर्य-चंद्रादिक के आभियोगिक विमान-वाहक देव..... (108) सूर्य-चंद्र की तीन पर्षदाएँ..... (109) ज्योतिष चक्र के चन्द्रादि की अग्रमहिषियाँ (पट्टराणियाँ)..... (110) ज्योतिष चक्र का प्रभाव मनुष्यों पर..... (111) सूर्यग्रहण-चंद्रग्रहणादि का स्वरूप क्या है ?.... (112) मनुष्य क्षेत्र के बाहर रहे हुए सूर्य-चन्द्रादि..... (113) मनुष्य क्षेत्र में सूर्य-चन्द्र की ६६-६६ पंक्तियाँ..... (114) चर ज्योतिष देवों के द्वारा मनुष्यलोक में काल का विभाग..... (115) जंबूद्वीप के सूर्य तथा चंद्र के मंडलादि का प्रमाण-अंतर इत्यादि.....★ जीव और पुद्‌गलों की रंगभूमी....

(द्वार - ३) अधोलोक

(116) रत्नप्रभा पृथ्वी अर्थात् प्रथम नरक..... (117) सातों नरकों में रहें हुए प्रतरों के नामादि..... (118) ८ व्यंतर देव..... (119) ८ व्यंतर देवों की अग्रमहिषी..... 120) व्यंतर देवों की ८७ जाति..... (121) ८ प्रकार के वाणव्यंतर देव..... (122) १० प्रकार के भवनपति देव..... (123) भवनपति निकाय के १० भेद.....(124) चमरेन्द्र महाराजा की चमरचंचा और उत्पातपर्वत..... (125) चमरेन्द्र कौन ? व कहाँ से आया ?..... (126) चमरेन्द्र का सौधर्मेन्द्र तरफ प्रयाण..... (127) बन्धनादि १० प्रकार की क्षेत्रवेदना... (128) नरक में १० प्रकार की क्षेत्रवेदना..... (129) नरक में परस्पर कृत वेदना..... (130) नरक में परमाधामी कृत वेदना..... (131) १५ प्रकार के परमाधामी देव..... (132) परमाधामी देवों की गति ?..... (133) परमाधामी संबंधी कुछ और जानने जैसा..... (134) द्वितीय शर्कराप्रभा नामक पृथ्वी..... (135) तृतीय वालुकाप्रभा नामक पृथ्वी..... (136) चतुर्थ पंकप्रभा नामक पृथ्वी..... (137) पांचवीं धूमप्रभा नामक पृथ्वी..... (138) छठवीं तमःप्रभा नामक पृथ्वी.....(139) सातवीं तमस्तमःप्रभा नामक पृथ्वी.....(140) पापीयों को सजा भुगतने का स्थान अर्थात् ७ नरक..... (141) कौन - से जीव नरकायुष्य को बान्धते है.... (142) क्या नारकी जीव कभी सुखी हो सकते है ?.....(143) कौन से जीव कौन-सी नरक तक जा सकते है !.....(144) नरक संबंधी कुछ जानने जैसा....

(पेज नं. १ से १६६)

THE REAL UNIVERSE (PART - 3)

(द्वार - ४) ऊर्ध्वलोक

(145) ऊर्ध्व वैमानिक देवलोक..... (146) वैमानिक देवलोक की व्यवस्था..... (147) १२ वैमानिक देवों के संबंध में कुछ जानने जैसा..... (पार्ट - १) (148) १२ वैमानिक देवों के संबंध में कुछ जानने जैसा..... (पार्ट - २) (149) अष्ट कृष्णराजी.....(150) नव (नौ) लोकांतिक देव..... (151) कल्पोपपन्न देवों के १० प्रकार..... (152) देवलोक के प्रतरों की व्यवस्था किस तरह है ?..... (153) ६२ प्रतर के कुल ६२ इन्द्रक विमान तथा नामादि..... (154) देवों का उत्तरवैक्रिय शरीर..... (155) किल्बिषिक देवों के प्रकार और उनके निवासस्थलादि..... (156) देव किन कारणों से मनुष्यलोक में आते है ?..... (157) किन कारणों से देव मनुष्यलोक में नहीं आते है ?..... (158) देवों की तथाविध भवप्रत्ययिक संपत्ति..... (159) वैमानिक देवलोक के विमानों का संख्या-दर्शक यंत्र..... (160) नव ग्रैवेयक के ९ विमान..... (161) नव ग्रैवेयक तक कौन उत्पन्न हो सकता है ?..... (162) ५ अनुत्तरवासी देव.... .(163) देवों के अवधिज्ञान का क्षेत्र और आकार..... (पार्ट - १) (164) देवों के अवधिज्ञान का क्षेत्र और आकार..... (पार्ट - २) (165) चारों निकाय के देव तीन विभागों में विभक्त है ..... (पार्ट - १) (166) चारों निकाय के देव तीन विभागों में विभक्त है ..... (पार्ट - २) (167) चारों निकायी देवों के १९८ भेद किस प्रकार होते है ?..... ★ उत्पाद - व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत्...

(द्वार - ५) प्रकीर्णक

(168) पृथ्वीकायादि ५ स्थावर जीव.....(169) त्रसकाय-विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीव..... (170) संसारी जीवों के ५६३ भेद... (मनुष्य-देव-नारकी)..... (171) संसारी जीवों के ५६३ भेद पर कुछ विचारणा..... (172) निगोद के जीवों का स्वरूप..... (173) औदारिकादि ५ शरीर..... (174) ऋजु और वक्रगति का स्वरूप.....(पार्ट - १) (175) ऋजु और वक्रगति का स्वरूप.....(पार्ट - २) (176) सिद्धों का सुख कैसा है ?..... (177) सिद्धशिला एवं सिद्धात्माएँ..... (178) सिद्धात्मा की अवगाहना..... (179) सिद्ध के १५ भेद और अनंतरादि प्रकार..... (180) आहारादि ६ पर्याप्ति..... (181) जीव के छः संस्थान और अजीव के पांच संस्थान..... (182) छः प्रकार के संघयण..... (183) ६ लेश्या का स्वरूप..... (184) आत्मा का विकासक्रम एवं १४ गुणस्थानक..... (पार्ट - १) (185)आत्मा का विकासक्रम एवं १४ गुणस्थानक..... (पार्ट - २) (186) आत्मा का विकासक्रम एवं १४ गुणस्थानक..... (पार्ट - ३) (187) केवली समुद्घात.....

(पार्ट - १) (188) केवली समुद्घात..... (पार्ट - २) (189) तीर्थंकर नामकर्म बंध कारण वीस स्थानक पद..... (190) पुद्गल (अजीव) के ५३० भेद..... (191) आठ कर्मों का स्वभाव..... (पार्ट - १) (192) आठ कर्मों का स्वभाव..... (पार्ट - २) (193) अवसर्पिणी काल के ६ आराओं का स्वरूप..... (पार्ट - १)(194) अवसर्पिणी काल के ६ आराओं का स्वरूप.....(पार्ट - २) (195) उत्सर्पिणी काल के ६ आराओं का स्वरूप..... (196) ६ प्रकार के बाह्य तप..... (197) ६ प्रकार के अभ्यंतर तप..... (198) श्री अष्टापदजी महातीर्थ..... (पार्ट - १) (199) श्री अष्टापदजी महातीर्थ..... (पार्ट - २) (200) क्या तुम्हें पता है भूकंप किस कारण से होता है ?.....

★ सुविदितं जगत्स्वभावम्...

(द्वार - ६) प्राचीन चित्रावली

(सैकड़ों वर्ष प्राचीन हस्तलिखित-ताडपत्रीय ग्रंथो में दिये हुए १४ राजलोक एवं उसके अंतर्गत दुसरे पदार्थों संबंधी १०० से अधिक प्राचीन चित्रों का संग्रह...

(पेज नं. १ से १६७)

THE REAL UNIVERSE (PART - 4)

(द्वार - ७)

(१) जैनधर्म की प्राचीनता के प्रमाण... (२) जैनधर्म की अतिप्राचीनता के प्रमाण... (३) जैन दिगंबर मान्यतानुसार लोक वर्णन... (४) बौद्ध मतानुसार लोक वर्णन.... (५) वैदिक धर्मानुसार लोक वर्णन... (६) भारतवर्ष का नामकरण..... (७) वैज्ञानिकों के मतानुसार आधुनिक विश्व (८) चातुर्द्वीपिक भूगोल परिचय (९) चलिए ! पृथ्वी की जानकारी प्राप्त करते हैं... वैज्ञानिकों के मुख से (१०) अमेरिका की "फ्लेट अर्थ सोसायटी" भी पृथ्वी को सपाट मानती हैं (११) रहस्यमय उत्तरध्रुव... (१२) पृथ्वी गेंद जैसी गोल नही है और वह घूमती भी नही हैं उसके १०१ प्रमाण... (१३) ईसाई धर्म भी पृथ्वी को समतल मानता है ... (१४) ईस्लाम दर्शन (धर्म) में भी पृथ्वी स्थिर हैं .... (१५) पृथ्वी के गोल होने के वैज्ञानिकों के पास कोई प्रमाण नही है... (01) प्लेटो व एरिस्टोटल पृथ्वी को समतल मानते थे... (02) आर्यभट्ट पृथ्वी को गोल मानते थे... (03) ब्रह्मगुप्त पृथ्वी को समतल मानते थे... (04) निकोलस कोपरनिकसने पृथ्वी के घूमते रहने का तुक्का लगाया.... (05) कोपरनिकस में इस पुस्तक को प्रकाशित करने की हिम्मत नही थी.... (06) टायको ब्राह पृथ्वी को समतल मानता था... (07) जोहानिस केप्लर था टायको ब्राह के शिष्य... (08) जोहानिस केप्लर बने टायको ब्राह के वारिस... (09) गैलीलियो गैलिली पृथ्वी को घूमती हुई मानते थे ...(10) ऑइजक न्युटन ने गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत की शोध की थी... (11) अल्बर्ट आइंस्टाइनने न्युटन की परिकल्पना को गलत सिद्ध किया था... (12) गोलाकार सतह पर प्रकाश सरल रेखा में गति नही करता है... (13) आइंस्टाइन की फ्रेम ड्रेगिंग परिकल्पना... (14) ब्लेक होल की अजीबोगरीब परिकल्पना...(15) आइंस्टाइन के सिद्धांत के समक्ष गुजरात के वैज्ञानिक की चुनौती...(१६) पू. आत्मारामजी महाराज के अंतरोद्गार... (१७) जानने जैसी तारातंबोल नगरी... (१८) हिमालय के उस पार... (१९) पल्योपम और सागरोपम का स्वरूप... (२०) पृथ्वी के आकार और स्थिरता संबंधी सुंदर साहित्य वर्णन... (२१) इन विषयों को जानने के लिए ये पढो... (२२) लोक के नामादि ८ निक्षेप.... (२३) **jain cosmology** ग्रंथ के लिए आए हुए अभिप्रायः पत्र.... (२४) पूज्यश्री के द्वारा अध्ययन-उपदेशात्मक एवं आगामी साहित्यों की सूची.... (२५) ग्रंथ प्रशस्ति....

(पेज नं. १ से १७३)

THE REAL UNIVERSE (PART - 5)

(द्वार - ८) "कृतिसंग्रह"

- प्राचीन-अर्वाचीन ग्रन्थकारों द्वारा लिखित चौदह राजलोक संबंधित पद्यात्मक भाषा में स्तुति-स्तवन-सज्झाय तथा पूजा की ढालों का अलौकिक "कृतिसंग्रह"...

(पेज नं. १ से ५२)

विशेष सूचना :- THE REAL UNIVERSE (सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड) ग्रंथ में बताये गये खगोल-भूगोल संबंधी १ से २०० तक के लेखों को हिन्दी भाषा में संगृहित कीया गया है। तथा इन लेखों के पदार्थों को जिन जिन शास्त्रसंदर्भ पाठों से युक्त बताना है उन उन स्थानों में छोटे-छोटे अक्षरो में (फोन्ट में) १-२-३-४-५-६-७ इत्यादि करके आंकड़ों में रख दिये गये है और उसके शास्त्रपाठ उसी पेज में नीचे टिप्पन के स्वरूप उन ग्रंथों के नाम एवं श्लोक संख्यादि के साथ बताया गया है।

लाभार्थी परिवार

श्री जिनगुण
आराधक ट्रस्ट
मुंबई

-: विशेष सूचना :-

यह ग्रंथ ज्ञानद्रव्य में से छपा हुआ होने
से गृहस्थो द्वारा मूल्य दिये बिना
मालिकी करनी नहीं ।

स्व.
श्री छोटालाल रीखवचंद
दोशी के
आत्मश्रेयार्थे
ह. रीखवचंद त्रीभोवनदास
दोशी परिवार

श्रीमती मोहिनीदेवी
एस. देवराजजी जैन
घाणेराव - (राज.)
चैन्नई, बेंगलोर

द्वार-८

कृति संग्रह

INDEX

क्रम	विषय...	आधारग्रंथ	कर्ता	पृष्ठ नं.
१	लोक स्वरूप संवेदना...	सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड	पू. पं. मोक्षरतिविजयजी म.सा.	१
२.	अथ लोक स्वरूप भावना (हरिगीत छंद)...	भुवनभानु केवली चरित्र		५
३.	अथ लोक स्वरूप भावना (हरिगीत छंद)...	प्राचीन हस्तलिखित पत्र	पू. ललितविजयजी म.सा.	५
४.	अथ लोक स्वरूप भावना (हरिगीत छंद)...	तत्त्वचिंतनसंचय	पू. अमृतविजयजी म.सा.	५
५.	लोक स्वरूप भावना......सज्झाय	श्री नवीन सज्जन सन्मित्र	उपा. सकलचंद्रजी म.सा.	५
६.	भवि लोक स्वरूप समर रे...	चतुर्विंशति स्तवनावली और बारह भावना	पू. आत्मारामजी	६
७.	लोक स्वरूप विचार... चेतन...	शांत सुधारस-गीतमाला		६
८.	लोक स्वरूप दशमी कही रे...	प्राचीन सज्झाय माला	पू. देवचंद्रजी म.सा.	७
९.	स्वरूप आ लोकनुं देखो...	नूतन स्तवनावली-लब्धिकृत संदोह	पू. लब्धिसूरिजी म.सा.	७
१०.	दशमी लोक स्वरूप रे भावना भावीये...	प्राचीन हस्तलिखित पत्र	पू. जयसोमजी म.सा.	८
११.	नीचे नीचे सात रत्नप्रभादि...	शांत सुधारस	पू. धुरंधरविजयजी म.सा.	८
१२.	हवे संठाण विचय सुणोजी...	प्रकरणादि विचारगर्भित स्तवन-सज्झाय संग्रह	पू. भावविजयजी म.सा.	९
१३.	जंबूद्वीप वर्णन गर्भित सीमंधर स्वामी स्तवनम्...	प्रकरणादि विचारगर्भित स्तवन-सज्झाय संग्रह	पू. स्वरूपचंदजी म.सा.	९
१४.	अथ चउद राजलोक पूजा...	चउद राजलोक पूजा	पू. वल्लभविजयजी म.सा.	११
१५.	जीव के ५६३ भेद गर्भित शांतीजिन स्तवन पच्चीशी...	श्री सुधाकर रत्न मंजुषा	पू. हंससागरजी म.सा.	२२
१६.	श्री जीवविचार स्तवनम्...	प्रकरणादि विचारगर्भित स्तवन संग्रह	पू. बुद्धिविजयजी म.सा.	२३
१७.	श्री नवतत्त्व स्तवनम्...	प्रकरणादि विचारगर्भित स्तवन संग्रह	पू. भाग्यविजयजी म.सा.	२९
१८.	श्री चौवीश दंडक स्तवनम् (प्रथम)...	प्रकरणादि विचारगर्भित स्तवन संग्रह	पू. पद्मविजयजी म.सा.	३७
१९.	श्री चौवीश दंडक स्तवनम् (द्वितीय)... (गति-आगति का स्वरूप)	प्रकरणादि विचारगर्भित स्तवन संग्रह	पू. धर्मचंद्रजी म.सा.	४३
२०.	६ आरा स्वरूप महावीर जिन स्तवनम्...	प्रकरणादि विचारगर्भित स्तवन संग्रह	पू. द्विज देवीदासजी	४५
२१.	अथ लोक स्वरूप भावना (संस्कृत ४ श्लोक)...	प्रकीर्णकानि	पू. चिरंतनाचार्य म.सा.	४८
२२.	अथ लोक स्वरूप भावना (संस्कृत श्लोक)...	अभिधान राजेन्द्र कोष	पू. राजेन्द्रसूरिजी म.सा.	४८
२३.	लोक स्वरूप भावना स्वरूपम् (प्राकृत श्लोक)...	संवेग रंगशाला		५१
२४.	अथ एकादशमी भावना (गेयाष्टकम्)...	शांत सुधारस-गेयाष्टकम्-एकादशप्रकाशः	पू. महो.विनयविजयजी म.सा.	५२

१. लोकस्वरूप संवेदना

(हरिगीत छंद)

॥ लोकविभाग ॥

इस विश्व में आत्मा अनंतानंत हैं, भटकी रही,
मैं सर्व जीवों को करुं, शाश्वतसुखी शासनरसी ।
जिनके हृदय में, प्रकट हुई ऐसी परम संवेदना,
पुरुषार्थ जनमजनम किया, श्री जिनवरों को वंदना ॥ १ ॥

हे नाथ ! केवलज्ञान द्वारा, जो निहारा आपने,
वो सत्य है, निःशंक है, जो भी बताया आपने ।
प्रभु ! आपके वचनों का आलंबन लिये बैठा हूं मैं,
विश्व स्वरूप निहारने को, मन किये बैठा हूं मैं ॥ २ ॥

यह विश्व तो अतिशय विशाल अगम्य और अपार है,
निर्माण नहीं है, नाश नहीं है, ना कोई आधार है ।
ईश्वर जगत्कर्ता नहीं, दृष्टा है वो ज्ञाता है वो,
विश्वव्यवस्था आदि तत्त्वज्ञान के दाता है वो ॥ ३ ॥

प्रभुवचन के अनुसार देखो, विश्व का आकार ये,
दिखता है ऊपर की तरफ से, विश्व गोलाकार ये ।
दो हाथ रखके कमर पर, दो पैरों को चौड़ा किये,
कोई खड़ा हो, विश्व ऐसा दिख रहा, चिहुं ओर से ॥ ४ ॥

आकाश - पुद्गल - जीव - धर्माधर्म अस्तिकाय ये,
और काल ये षड्द्रव्य हैं, इस विश्व के हर स्थान में ।
षड्द्रव्यमय इस विश्व को, कहते हैं लोकाकाश भी,
इस विश्व की हर तरफ है, अद्भुत अलोकाकाश भी ॥ ५ ॥

इस विश्व की ऊंचाई चौदह, रज्जूलोक प्रमाण है,
ऊपर करीबन सात रज्जू, ऊर्ध्वलोक महान है ।
नीचे करीबन सात रज्जू, अधोलोक विशाल है,
और बीच में है एक रज्जू, मध्यलोक निहाल है ॥ ६ ॥

॥ मध्यलोक ॥

हैं द्वीप और समुद्र अगणित वर्तुलाकृति में यहां,
देखो बराबर बीच में, श्री जम्बूद्वीप दिखे यहां ।
है एक लाख विशाल योजन, नाप जम्बूद्वीप का,
है द्विगुण द्विगुण प्रमाण आगे, सर्व-सागर-द्वीप का ॥ ७ ॥

लघु-महाहिमवंत-निषध-नीलवंत-रुक्मि-शिखरी नाम से,
यहां छः गिरिओं से विभाजित सात सुंदर क्षेत्र हैं ।
दक्षिण दिशा से भरत-हिमवंत-हरिवर्षम् नाम हैं,
महाविदेह-रम्यक्-हिरण्यवंत-ऐरावतम् शुभ क्षेत्र हैं ॥ ८ ॥

लघु हिमवंतादि गिरि पर,पद्म आदि द्रह यहां,
इन में से गंगा सिन्धु आदि, निकलती नदियां जहां ।
पद्मादि सरोवर में रहे, श्रीदेवी आदि देवियां,
लाखों हैं देवीदेव गूंजे, हर जगह शहनाइयां ॥ ९ ॥

यहां एक लाख ऊंचाई योजन, मेरुगिरि है मध्य में,
इस स्वर्णमय गिरि के शिखर पर चार महावन शोभते ।
श्रीभद्रशाल श्रीनंदनवन सौमनस और पांडुकवनम्,
पांडुकवन में होते हैं, जिनजन्म अभिषेकोत्सवम् ॥ १० ॥

इस मेरुगिरि की चौतरफ, गजदंत पर्वत चार हैं,
उत्तर दिशा में उत्तरकुरु, क्षेत्र युगलिक काल हैं ।
गिरि यमक-समक, लघुद्रह दश, दो सौ यहां कंचनगिरि,
दक्षिणदिशा में देवकुरु में, युगल हैं खुशियां खिली ॥ ११ ॥

हिमवंत, हरिवर्ष और रम्यक्, हिरण्यवंत में तो सदा,
रहता है युगलिक काल देते, कल्पतरु सुखसम्पदा ।
श्री ऐरावत भरत शुभ और अशुभ अस्थिर काल है,
सर्वोच्च सद्गति दुर्गति, महाविदेह में स्थिर काल है ॥ १२ ॥

इस महाविदेह में अल्पतम, अरिहंत चार रहे सदा,
बलदेव-वासुदेव-चक्री, चार-चार रहे सदा ।
बत्तीस तीर्थंकर यहां, उत्कृष्ट से विचरे परम,
बलदेव-वासुदेव अट्ठाईस चक्री अधिकतम ॥ १३ ॥

श्री ऐरावत भरत भूमी में, कालचक्र विशाल है,
उत्सर्पिणी अवसर्पिणी, चढ़ता उतरता काल है ।
प्रत्येक में चौबीस तीर्थंकर क्रमानुसार है,
बलदेव नौ हरि नौ हैं बारह, चक्री पुण्य अपार है ॥ १४ ॥

इस जम्बूद्वीप - उत्तरकुरु में, जम्बूवृक्ष है झलकता,
इस रत्नमय महावृक्ष पे, रहे द्वीप अधिपति देवता ।
इस शाश्वता महावृक्ष पर, शाश्वत जिनालय शोभता,
सुरभवन-गिरि-तरु बहुत हैं, जहां जैनमंदिर शाश्वता ॥ १५ ॥

इस जम्बूद्वीप के आसपास, लवणसमुद्र विशाल है,
वलयाकृति इस जलधि में, पातालकलश कमाल हैं ।
कलशों में नीचे वायु है, जो उछलता है अवसरे,
इसकी वजह से ज्वार-भाटा, आता है जलधितटे ॥ १६ ॥

गोस्तूप आदि आठ वेलंधर अनुवेलंधरम्,
गिरि हैं यहां और गौतमादि, द्वीप हैं इकत्तिस परम ।
गौतम में लवणसमुद्र-अधिपति, देव सुस्थित रह रहा,
वरदाम - मागध आदि तीर्थद्वीप - सरोवर हैं यहां ॥ १७ ॥

लघुहिमवंत शिखरीगिरि से, पूर्व-पश्चिम में यहां,
दाढा निकलती चार-चार, हरेक दाढा पे यहां ।
हैं सात अन्तर्द्वीप जिसमें, युगल नरनारी खिले,
सुखभोग जीवनभर मरण के बाद स्वर्गभवन मिले ॥ १८ ॥

इस जलनिधि के आसपास, महान धातकीखंड है,
भरतादि क्षेत्र - गिरि - नदी, यहां द्विगुण जम्बूद्वीप से ।
बलदेव - वासुदेव - चक्री - जिनपति भी द्विगुण हैं,
पुष्करवर द्वीपार्ध में, संख्या यही जिनवर कहे ॥ १९ ॥

इस खंड की बाहर तरफ, कालोदधि सागर बड़ा,
इसके भी बाहर की तरफ, पुष्करवर द्वीपम् खड़ा ।
पुष्करवर द्वीपार्ध तक, नरलोक है मुक्तिगमन,
जम्बू व धातकी पुष्करार्द्धम् ढाईद्वीप है शुभमिलन ॥ २० ॥

जम्बू है योजन एक लवण, समुद्र योजन चार है,
है आठ धातकी, काल-पुष्कर, सोलह-सोलह नाप है ।
यह ढाईद्वीप है लाख पैंतालीस योजन कुछ मिला,
लोकाग्र पर इतनी ही सिद्धशिला रही है झिलमिला ॥ २१ ॥

बत्तीस सौ उन साठ शाश्वत, जैनमंदिर हैं यहां[१],
तीन लाख इक्यानवे हजार व तीन सौ बीस मूर्तियां ।
अरिहंत संख्या एक सौ सत्तर यहां उत्कृष्ट है,
इन सर्व को कर वंदना, मेरा हृदय संतुष्ट है ॥ २२ ॥

---

(१) यहां अर्थात् तिर्च्छालोक (मध्यलोक)

धरती ऊपर बहुतेक द्वीपों में तथा आकाश में,
सभी स्वर्गभवनों में तथा इस पृथ्वी के पाताल में ।
पंद्रह अरब बयालिस करोड, अट्ठावन लाख हैं शाश्वती,
छत्तिस हजार अस्सी जिनेश्वर-मूर्तियां मनोहर अति ॥ २३ ॥

संख्या ये तिर्छालोक - वैमानिक - भवनपति स्वर्ग की,
अनगिनत व्यंतर ज्योतिषी में, जिनप्रतिमा शाश्वती ।
भक्ति करे मिल देवदेवी, जन्म सफल करे सभी,
शाश्वत जिनेश्वर-मूर्ति का, दर्शन करूंगा मैं कभी ? ॥ २४ ॥

शाश्वत जिनेश्वर नाम हैं, श्री ऋषभ चंद्रानन तथा,
श्री वारिषेण प्रभु तथा, श्री वर्धमान हरे व्यथा ।
ऊर्ध्वं अधो या मध्यलोक, कहीं भी हैं जो शाश्वती,
जिनमूर्तियां वो हैं सभी, इस नाम से कहे जिनपति ॥ २५ ॥

है आठवां महाद्वीप नंदीश्वर यहां चारों तरफ,
हैं श्यामवर्णी चार अंजनगिरि जहां चारों तरफ ।
सोलह दधिमुखगिरि तथा बत्तीस रतिकरगिरि यहां,
प्रत्येक पर है जिनभवन, बावन जिनालय हैं महा ॥ २६ ॥

हर साल चौमासी तथा, नवपदजी ओली पर यहां,
कल्याणकोत्सव बाद सुर, आकर करे उत्सव महा ।
ग्यारावें रुचकद्वीप में, चालीस दिक्कुमरी रहे,
गजदंतगिरि मेरुगिरि पर, आठ-आठ कुमरी रहे ॥ २७ ॥

है लवणजल खारा मदिरा, जैसा वारुणीवरजलम्,
है क्षीरवरजल दूध जैसा, घी समा घृतवरजलम् ।
कालोदधि पुष्करवरम्, अंतिम स्वयंभूरमण ये,
सामान्यजल जैसे हैं बाकी जलधि इक्षुरस भरे ॥ २८ ॥

इस जम्बूद्वीप से दूर अगणित सागरों के बाद जो,
आता अरुणवर जलनिधि, इस में से ऊपर की तरफ ।
इक श्यामवर्णी जल समान पदार्थ पंचम स्वर्ग तक,
उछले गिरे नीचे सतत, चौतरफ है तमस्काय वो ॥ २९ ॥

दश न्यून आठसों योजने, समभूतला से स्थित है जो,
चंदा-सूरज-नक्षत्र-ग्रह-तारा हैं देवविमान वो ।
नरलोक में अस्थिर सभी, बाहर सभी सुस्थिर रहे,
ज्योति बिखेरे इसलिये, इसको सभी ज्योतिष कहे ॥ ३० ॥

इस जम्बूद्वीप में दो रवि, दो चन्द्र हैं नक्षत्र तो,
छप्पन्न हैं इकसौ छहत्तर, ग्रह अभी तारा सुनो ।
इक लाख और हजार तैंतिस और नौ सौ और भी,
पच्चास कोडाकोडी है, आगे हैं द्विगुण द्विगुण सभी ॥ ३१ ॥

॥ अधोलोक ॥

देखो अधोलोकम् यहां पे, सात पृथ्वी हैं खड़ी,
ऊपर से नीचे की तरफ, है एक दूसरे से बड़ी।
उलटा रखा हो छत्र जैसे, आकृति ऐसी कही,
एकेक रज्जूलोक में, एकेक ये पृथ्वी रही ॥ ३२ ॥

हम हैं अभी जिस धरती पर, ''रत्नप्रभा'' शुभ नाम है,
यह है शिला जैसी इसी में, बहुत से अंतराल है ।
नीचे यहां से वाणव्यंतर, भवनपति सुरवास है,
देवी सरस्वती व्यंतरेन्द्राणी यहां आवास है ॥ ३३ ॥

एकेक पृथ्वी में यहां, एकेक नरकावास है,
भूख प्यास गर्म ठण्ड अशुचि, व्याधि भय महात्रास है ।
आपस में लडते खूब परमाधामी दे महावेदना,
पल-पल यहां चाहे सभी, अतितीव्रता से निकलना ॥ ३४ ॥

जो है महामिथ्यात्वी जो, अतिकामी है अतिक्रूर है,
महाचोर व्यभिचारी मदिरामांस मे चकचूर है ।
महाक्रोधी हैं महालोभी है, महामायी है महामानी है,
वो जीव जाता नरक में, ऐसी प्रभु की वाणी है ॥ ३५ ॥

॥ ऊर्ध्वलोक ॥

आओ अभी जाएं सभी, हम ऊर्ध्वलोक निहारने,
हैं देव वैमानिक यहां, सबसे सुखी संसार में ।
सौधर्म आदि स्वर्ग बारह, स्वामी सेवक भाव है,
ग्रैवेयकम् नौ में, अनुत्तर पांच में अहमिन्द्र हैं ॥ ३६ ॥

नौ देव - जिनवर को दिलाये, याद जो दीक्षा समय,
एकावतारी हैं उन्हें, वंदन करें उल्लासमय ।
ये पांचवां जो स्वर्ग है, श्री ब्रह्मलोक यहां रहे,
लोकान्त स्थल में वास है, तो देव लोकान्तिक कहे ॥ ३७ ॥

ना सूर्य-चन्द्र न रात-दिन, रत्न प्रकाश बिखेरते,
न थकान-नींद सतत सभी, आनंद रस में खेलते ।
क्रीडागिरि - उद्यान - वापी - कल्पवृक्ष - विमान हैं,
संगीत - नाट्य - विलास - उत्सवरंग अवधिज्ञान है ॥ ३८ ॥

ज्योतिर्मयी अति स्वच्छ सुंदर, स्वर्णरंगी देह है,
नहीं रोग-अशुचि, सुरभि श्वासोश्वास, अतिशय स्नेह है ।
यौवन सदा सुस्थिर रहे, आयुष्य अपरंपार है,
सौभाग्यलीला लब्धि सिद्धि-रिद्धि पारावार है ॥ ३९ ॥

अरिहंत कल्याणक महोत्सव हेतु आए पृथ्वी पर,
नंदीश्वरादि द्वीप की यात्रा करे उल्लासभर ।
शाश्वत जिनालय में करे, प्रभुभक्ति सबकुछ भूलकर,
जिनवाणी श्रवण मनन करे, ये देवता सारी उंमर ॥ ४० ॥

जो देवगुरु का भक्त है, अत्यंत अल्प कषायी है,
संतोष - समता - सरलता - मृदुता - करुणा पाई है ।
जो है तपस्वी दानी है, जो सर्वविरति धारी है,
वो स्वर्ग सुख को भोगता है, जिनवचन बलिहारी है ॥ ४१ ॥

सभी स्वर्ग के ऊपर है सिद्धशिला स्फटिकमय शाश्वती,
लोकाग्र पर हैं सिद्धजीव, अनंत अनुपम अभिरति ।
संसार की प्रत्येक आत्मा, कामना जिसकी करे,
सर्वातिशायी सुख वहीं, बस है यहीं पर, प्रभु कहे ॥ ४२ ॥

हे नाथ ! यह सुनकर मेरा संसार से मन उठ गया,
जो आपने पाया, मुझे भी दो, प्रभु ! कर दो दया ।
''सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड'' के स्वाध्याय से जगी भावना,
मिली **''मोक्षरति''** लगता है मेरी पूर्ण होगी कामना ॥ ४३ ॥

बारह प्रकारी भावना में, ये भी है इक भावना,
है धर्मध्यान-प्रकार भी ''लोकस्वरूप विभावना'' ।
वैराग्य प्रगटे दृढ बने, संवेग जागे स्थिर बने,
जिनवर प्रकाशित लोकचिंतन से जीवन झिलमिल बने ॥ ४४ ॥

सर्वज्ञ पर आदर बढ़े, उपदेश पर श्रद्धा जगे,
सारा जगत खारा लगे, जिनशासनम् प्यारा लगे ।
ना क्लेश जीवन में रहे, संक्लेश ना मन में रहे,
यह तत्त्वज्ञान प्रभाव है, शुभभावना अविरत बहे ॥ ४५ ॥

ले. पं. श्री मोक्षरतिविजयजी म.सा....

२. ॥ अथ लोक स्वरूप भावना ॥

(हरिगीत छंद)

दधिमंथने रहे पाद तेवी आकृति जाणो अधो...,
वली ऊर्ध्वलोक मृदंग सम, आकार जेनो छे बधो ।
छे झल्लरी सम लोक तिर्छा, लोकनाळे भाखियो,
ए लोक कटि पर हाथ दई ऊभा पुरुष सम दाखियो...॥१॥
आ रंगमंडप लोकमां जीव पात्र भजवे वेषने,
काई हर्ष शोक उद्योत तमः दे राग द्वेष प्रदेशने...।
जे स्थान जंतु अनंतनुं नहीं आदि अंत सु शाश्वतो,
श्री भुवनभानु केवली ए भाव भावी शीव जतो...॥२॥

पुरुषार्थसिद्धि–मोक्षवर्ग (भुवनभानु केवली चरित्र...)

३. ॥ अथ लोक स्वरूप भावना ॥

(हरिगीत छंद)

दशमी लोकनी भावना आणो, छ्ये द्रव्यनुं स्वरूप पीछाणो ।
चेतनवंत जीव एक एक, पुद्गल रचना अनुभव में...॥१०॥

(ललितविजयजी कृत...)

४. ॥ अथ लोक स्वरूप भावना ॥

(हरिगीत छंद)

कटि पर स्थापित हस्त प्रसारित, पाद पुरुषना जेवो जेह...,
षड्द्रव्यात्मक लोक अनादि, अनंत स्थिति धरनारो तेह ।
उत्पत्ति व्यय ध्रौव्य युक्त ते, ऊर्ध्व अधो ने मध्य गणाय,
लोक स्वरूप विचार करतां, उत्तम जनने केवल थाय...॥१३॥

(अमृतविजयजी कृत...)

५. ॥ लोक-स्वरूप भावना सज्झाय ॥

(राग : जीना यहां मरना यहाँ)

ज्ञान नयनमांहे त्रिभुवन रूपें, जेणे जिन दीठो लोगो,
निधणीयातो षड्द्रव्यरूपो, प्रणमो तस जिन योगो...
मुनिवर ! ध्यावो अढीयद्वीप...
जिहां जिन मुनिवर सिद्ध अनंता,जिहाँ नहीं ज्ञान वियोगो...
मुनिवर ! ध्यावो अढीयद्वीप...(१)
आपे सिद्ध केणे न कीधो, जस नहीं आदि अंतो,
लीधो केण न जाए–भूजबले, भरीयो जंतु अनंतो...
मुनिवर ! ध्यावो...(२)
अनेक द्रव्य पर्याय परिवर्तन, अनंत परमाणु स्कंधे,
जेम दिसे तेम अकल अरूपी, पंचद्रव्य अनुसंधे...
मुनिवर ! ध्यावो...(३)
अचलपणे चलन प्रति कारण, धर्मास्तिकाय प्रदेशो,
स्थिर हेतु अधर्मास्तिकायथी, लोकाकाश अतिदेशो...
मुनिवर ! ध्यावो...(४)
मध्ये एक रज्जु त्रस नाडी, चउदस रज्जु प्रमाणो,
अनंत अलोकी गोटे वींट्यो, मस्तके सिद्ध अहिठाणो...
मुनिवर ! ध्यावो...(५)
अधोलोक छत्रासन समवड, तिर्छा झल्लरी जानो,
ऊर्ध्वलोक मृदंग समाणो, ध्यान 'सकल' मन आणो...
मुनिवर ! ध्यावो...(६)

(उपा. श्री सकलचंद्रजी महाराज कृत...)

६. ॥ लोक स्वभाव भावना ॥

(राग : अजवाला देखाडो, अंतर द्वार उघाडो...)

भवि लोक स्वरूप समर रे... सम... ॥आंचली॥
कटि धरी हाथ चरण विस्तारी, नर आकृति चित्त धर रे ।
षड्द्रव्य पूरण लोक समर ए, उपजत बिनसत थिर रे... ॥
भवि लोक...(१)

त्रिभुवन व्यापक लोक विराजे, पृथवी सात सुधर रे ।
घनोदधि घन तनु वात वलि कलशे, चार ओर रही थीर रे...॥
भवि लोक...(२)

वैत्रासन सम लोक अधो हैं, झल्लरी निभ मध्यवर रे ।
मुरजाकार ही ऊर्ध्वलोक हैं, भाषे जग जिनवर रे... ॥
भवि लोक...(३)

रचना इसकी किनही न कीनी, नहीं धारयो किन कर रे ।
स्वयं सिद्ध निराधार लोकये, गगन रह्यो ही अचर रे... ॥
भवि लोक...(४)

ईश्वर कृत्य ही लोक जो माने, सो आग्या नहीं बर रे ।
आत्मानंदी जिनवर जप्पो, मान मिथ्या मत हर रे...॥
भवि लोक...(५)

(पू. आत्मारामजी महाराज (विजयानंदसूरिजी) कृत...)

७. ॥ लोक-स्वरूप भावना...॥

(शांत सुधारस... गीतमाला)

(राग- मेरा जीवन कोरा कागज...)

लोक स्वरूप विचार, चेतन... लोक स्वरूप विचार...
काल अनादि शाश्वत जेनो, ज्ञानी कहे अधिकार...
सकल चराचर वस्तुने जे, निज तनमां धरनार...
चेतन... लोक स्वरूप...(१)

असंख्य योजन मान छे जेनुं, अलोक वैष्टित जाण,
धर्मादि पंचकाय नियत त्यां, सीमा सुघटित मान...
चेतन... लोक स्वरूप...(२)

केवली समुद्घाते भरे पूरण, निज प्रदेशथी लोक,
विविध क्रिया गुण गौरव करे, जीवने पुद्गल थोक...
चेतन... लोक स्वरूप...(३)

लोकाकाश छे एक छतां पण, पुद्गलथी थाय भिन्न,
मेरुशृंग सम क्यांय छे उन्नत, कहीं गर्ता कहीं खीण...
चेतन... लोक स्वरूप...(४)

कोईक स्थल उत्सव जय मंगल, मधुर वीणा झंकार,
दुःख विषाद छे कोईक स्थलमां, वरते हाहाकार......
चेतन... लोक स्वरूप...(५)

ममतावश जीव जन्म मरणने, करतो अनंती वार,
सम विषम ते भावे परिचित, लोकस्वरूप संसार...
चेतन... लोक स्वरूप...(६)

एवा विश्वथी खिन्न हे भविजन ! जिनवरनुं धरो ध्यान,
विनयधरी करो सद्गुण संगम, शांत सुधारस पान...
चेतन... लोक स्वरूप...(७)

८. ॥ लोक-स्वरूप भावना ॥

(राग : कबीर दोहा)

दुहा

मोहरायनी फौज जे, कर्म कटक कहेवाय।
ध्यानानलने ज्ञानना, गोलाथी भेदाय...॥१॥
लोकस्वरूप विचारतां, वस्तु तत्त्व समझाय।
अद्‌भुत हृदय प्रकाशथी, भवभ्रमण मिट जाय...॥२॥

(राग : चांदि की दीवार न तोड़ी.....)

लोकस्वरूप दशमी कही रे, भावना अति मनोहार,
चौदराज परिणामथी रे, ऊर्ध्व पुरुष आकार...
भविकजन ! वीर वचन अवधार... (१)
कटि भागे बे कर रह्यां रे, पहोला पाद प्रमाण,
योजन संख्यातीतमां रे, लोक क्षेत्र परिणाम...भविकजन... (२)
धर्माधर्मादिक रह्यां रे, पूर्ण पंचास्तिकाय,
वरते आप स्वभावमां रे, आदि अंत न थाय...भविकजन... (३)
रंगमंडप सम-लोकमां रे, नाटक जीव करंत...,
वेश लिए विधविधपणे रे, नर सुर रूप धरंत...भविकजन.. (४)
नारक तिर्यंच वेशमां रे, भमियो काल अनंत,
दुःख सह्या बहु भातीना रे, भाखे श्री भगवंत..भविकजन.. (५)
ऊँचे सिद्धशिला रही रे... अविनाशी सुखधाम,
कुशलदीप गुरु बोधथी रे...''देव'' दिले आराम...भविकजन... (६)

(पू. देवचंद्रजी कृत...)

९. ॥ लोक स्वरूप भावना की सज्झाय ॥

(राग : दयासिन्धु दयासिन्धु, दया करजे...)

स्वरूप आ लोकनुं देखो, मनुष्यनी आकृति धरतुं,
भरेलुं षट्‌द्रव्योथी, सुंदर ए भावना भावो....(१) स्वरूप आ...

चोरासी लाख जीवयोनी, भटकता भव विषे पाम्यो..,
अनंता जन्म मरणो तुं, सुंदर ए भावना भावो...(२) स्वरूप आ...

कमर पर हाथने स्थापी, पगो पहोला करी ऊभो,
रहेल नर जेम दुनिया छे, सुंदर ए भावना भावो...(३) स्वरूप आ....

कदी माथा ऊपर आवे, कदी जीव पगमां आवे,
कदी केडे कदी ओडे (गरदन),सुंदर ए भावना भावो..(४)स्वरूप आ..

अधो आकार वैत्रासन[१], मध्यमां झल्लरी[२] जेवा,
ऊपर मुरजाकृति[३] जानो, सुंदर ए भावना भावो...(५) स्वरूप आ...

रज्जु छे चौद जेनुं मान, ऊपर नीचेथी जो गणीये,
तिरश्चीनमां घणा भेदो, सुंदर ए भावना भावो...(६) स्वरूप आ...

प्रदेशे एक एके हाँ !, लीधा अनंत में मरणों,
न आपे कोई त्यां शरणो, सुंदर ए भावना भावो...(७) स्वरूप आ...

नरक निगोदमां करमे, भगाड्यो चौद रज्जुमां,
नथी त्यां दुःखनो आरो, सुंदर ए भावना भावो...(८) स्वरूप आ...

मुक्त रूपे अमर होवे, मस्तक शिला ऊपर वासो,
मले आनंद तो खासो, सुंदर ए भावना भावो...(९) स्वरूप आ...

---

(१) गोलाकार नेत्तर की खुरशी (२) झालर (झल्लरी) (३) मृदंग

अनादिथी छे ए सृष्टि, नथी कोई एहनो कर्ता,
करम तेनो छे व्यवहर्ता, सुंदर ए भावना भावो...(१०) स्वरूप आ...
आतम कमल हितकारी, भावो ए भावना सारी,
मले लब्धि सुखाकारी, सुंदर ए भावना भावो...(११) स्वरूप आ...

(आ. श्री लब्धिसूरिजी कृत...)

१०. ॥ लोक-स्वरूप भावना ॥

दुहा

मन दारु तन नालु करी, ध्यानानल सलगावी।
कर्म कटक भेदन करी, गोला ज्ञान चलावी... ॥१॥
मोह राय मारी करी, ऊँचो चढी अवलोय।
त्रिभुवन मंडप मांडणी, जिम परमानंद होय... ॥२॥

(राग : शास्त्रीय)

दशमी लोकस्वरूप रे भावना भावीये निसुणी गुरु उपदेशथी ए... ॥१॥
ऊर्ध्व पुरुष आकार रे पग पहोला करी कर दोय कटी राखीए ए... ॥२॥
ऐने आकारे लोक रे पुद्गल पूरीओ जिम काजलनी कुंपली ए... ॥३॥
धर्म-अधर्म आकाश रे देश-प्रदेश ए जीव अनंते पूरीओ ए... ॥४॥
सातराज देशोन रे ऊर्ध्व तिरिय मली अधोलोक सात साधिकुं ए... ॥५॥
चौदराज त्रस नाडी रे त्रस जीवालय एक रज्जु दीर्घ विस्तरूं ए... ॥६॥
ऊर्ध्व सुरालय सार रे निरव भुवन नीचे नाभी नर तिरि दो सुरा ए...॥७॥
द्वीप-समुद्र असंख्य रे, प्रभुमुख सांभली राज ऋषि शिव समझीयो ए...॥ ८॥
लांबी पहोली पणयाल रे लख जोयण लही सिद्ध शिला शिर उजली ए... ॥९॥
ऊंचो धनुसयतीन रे तेत्रीश साधिके सिद्ध योजनने छेहडे ए... ॥१०॥
अजर अमर निकलंक रे नाणदंसणमय ते जोवा मन गहगहे ए... ॥११॥

(पू. जयसोम मुनि कृत...)

११. ॥ लोकस्वरूप भावना ॥

(दुहा)

नीचे नीचे सात रत्नप्रभादि, जे छे नर्को आकारधारी ।
तेणे पूर्यो आ अधोलोक जेना, पादो छे सात रज्जु पहोला ॥ १ ॥
पहोलो तिर्छालोकने एक राज, ज्यां छे दवीयों अब्धि वींट्या असंख्य।
वींष्टी ज्योतिष चक्रनी कांची रम्य, जेनो सोहे पातलो केड भाग ॥ २ ॥
ऊर्ध्वलोके जेहनो ब्रह्मस्वर्ग प्होलो रज्जु छे पांच कोणिभाग
प्होलो रज्जु एक लोकांत जास, मौली सिद्धो रूप ज्योते बसंत ॥ ३ ॥
जे वैशाख स्थानके पाद राखी, केडे मूकी हाथ बन्ने अनादि,
कालेथी उभो छे टट्टार नित्य, थाक्यो लागे तोये मुद्दा अखिजा ॥ ४ ॥
ते आ जाणो लोक नामे पुरुष, षट्द्रव्यात्मा शाश्वतो ने अनादि-
अनंतो ने धर्म आकार आदि, द्रव्ये पूर्या जेहना सर्वदेश ॥ ५ ॥
रंगस्थान पुद्गलोनुं अने जे, नाना रूपे नाचता जीवनुं छे ।
कालोद्योगादिकना भावे कर्म, वाजिंत्रोथी नियतिए नचाव्या ॥ ६ ॥
आवो लोक चिंतवतो विवेके, आपे डाह्याने मनःस्थैर्य स्हेजे ।
स्थैर्य आव्ये चित्तमां तुर्त थाती, आत्मा केरा दिव्य सौख्योनी प्राप्ति ॥ ७ ॥

(राग : एक पंखी आवीने ऊडी गयो...)

विनय ! तुं चिंतव चित्तमां, शाश्वत लोकाकाश,
सकल चराचर वस्तुने, आपे जे अवकाश...विनय तुं चिंतन...॥ १॥
दीप्र अलोकथी वींट्यु जे, जेनुं मान अमाप,
धर्मादिक द्रव्ये रची, जेनी सीमा आप... विनय तुं चिंतन...॥ २ ॥
समुद्घात समये जिने, जेने निजथी पूर्यु,
जीव अणुनी विविध कंपाना गौरवे घेर्युं... विनय तुं चिंतन...॥ ३ ॥

एक छतां पुद्गल वडे, रूपों बहुविध करतुं,
क्यांक ऊंचा मेरु क्यहि, उंडी गर्ता घरतुं... विनय तुं चिंतन...४
क्यांक अमर मणि गेहना, तेजे दीपे जेह,
क्यांक विरूप नरकादिना, घोर तिमिरनुं गेह...विनय तुं चिंतन...५
क्यांक उत्सवमय ऊजलुं, गाजे जयनादे,
क्यांक महा हाहारवे भर्युं शोक विषादे... विनय तुं चिंतव...६
ममता करीने मूकता, जन्म-मरणे फरता,
वार अनंती जीव सहु, जस परिचय करता... विनय तुं चिंतन...७
प्रणमो जिनने जो तमे, थाक्यां अहीं फरतां,
जेह शमामृत पानथी, "विनयी"ने उद्धरता... विनय तुं चिंतन...८

(मुनि धुरंधरविजयजी म.सा. कृत...)

१२. ॥ चार ध्यान के स्वरूप की सज्झाय.....॥

(राग : मैली चादर ओढ के कैसे.....)

हवे संठाण विचय सुणोजी, चोथो सार प्रकार ।
इहां जिनभाषित चिंतवेजी, लोकादिक आकार...
चतुरनर ! सेवो श्री जिनवाण...॥१९॥
नर ऊभो पहोळे पगेजी, दोय कर देई कटिदेश ।
ते सरिखुं चारे दिशेजी, लोकाकाश निवेश...
चतुरनर ! सेवो श्री जिनवाण...॥२०॥
इम हेठी साते महीजी, तेम बहु नरकावास ।
भवन भवनपति तणाजी, व्यंतर नगर सुवास...
चतुरनर ! सेवो श्री जिनवाण...॥२१॥
द्वीप उदधि वळी ग्रहगणाजी, सुरमंदिर निर्वाण ।
जीवाजीवादिक तणाजी, चिंतवीए संठाण...
चतुरनर ! सेवो श्री जिनवाण...॥२२॥
लोकप्रमुखना जे कह्याजी, संठाणादिक भाव ।
ते चिंतवतां जीवनोजी, स्थिर थाय शुभ भाव...
चतुरनर ! सेवो श्री जिनवाण...॥२३॥
एणी परे धर्मध्याननाजी, कहीए चार प्रकार ।
"भाव"कहे नित्य भावजोजी, भवियण गुण भंडार..
चतुरनर ! सेवो श्री जिनवाण...॥२४॥

(प.पू. भावविजयजी कृत...)

१३ जंबूद्वीप वर्णन गर्भित श्री सीमंधरस्वामी जिन स्तवनम्.....

(राग : मैत्री भावनुं पवित्र झरणुं.....)

मारी विनतडी अवधारो साहिबा, सीमंधर महाराज ।
त्रिभुवन साहेब अरज सुणजो, दरिसण देजो आज ।
दरिसण देजो महेर करजो, अरज सुणजो राज...
मारी विनतडी...॥१॥
आप वस्या महाविदेह क्षेत्रमां, हुं इण भरत मोजार ।
आ मेळो किम होशे साहिब, एहि सबल विचार...
मारी विनतडी...॥२॥
भरत विचाले परवत आडो, लांबो छे वैताढ्य ।
पचीश जोजन तो ऊंचो छे, पचास योजन विस्तार...
मारी विनतडी...॥३॥

गंगा सिंधु दोनुं नदिया, आडी छे किरतार ।
सहस अठ्ठावीस बीजी नदियां, ए बेहुनो परिवार...
मारी विनतडी...॥ ४ ॥

इण आगल वळी परवत आडो, चूल हेमवंत नाम ।
एक सहस वळी बावन योजन, बार कला अभिराम...
मारी विनतडी...॥ ५ ॥

क्षेत्र हेमवंत वळी प्रभु आडो, जुगलीयां केरो वास ।
एकवीस सहस की पांच योजन, पांच कला सुविलास...
मारी विनतडी...॥ ६ ॥

रोहिता ने वळी रोहितांशा, नदियों एमां असराल ।
छप्पन सहस वळी बीजी नदियों, आवुं केम कृपाल...
मारी विनतडी...॥ ७ ॥

महाहेम वळी परवत आडो, मोटो अति विस्तार ।
चार सहस दोयसें दश योजन, दश कला विस्तार...
मारी विनतडी...॥ ८ ॥

आठ सहस शत चार अनोपम, एकवीस जोजन ताम ।
एक कला वळी एह प्रमाण, क्षेत्र छे हरिवर्ष नाम...
मारी विनतडी...॥ ९ ॥

हरिकांता ने हरिसलिला, नदीयों छे प्रत्यक्ष ।
बीजी नदीयों आडी छे प्रभु, सहस बार एक लक्ष...
मारी विनतडी...॥ १० ॥

परवत निषध छे वळी आडो, योजन बहु विस्तार ।
सोल सहस शत आठ बैंतालीश, दोय कला मनोहार...
मारी विनतडी...॥ ११ ॥

क्षेत्र छे वळी युगलीयां केरो, देवकुरु इण नाम ।
अगियार सहस आठशे बैतालीश, बे कला पहोळे सुण स्वाम..
मारी विनतडी...॥ १२ ॥

सीता नामे नदी वडेरी, सब नदीयोंमां सरदार ।
पांच लाख वळी बीजी नदीयों, अने बत्रीश हजार...
मारी विनतडी...॥ १३ ॥

लाख योजननो मेरु पर्वत, नाम सुदर्शन सार ।
गजदंता वळी मारग बीच में, आवुं केम महाराज...?
मारी विनतडी...॥ १४ ॥

त्रीश सहस बसें नव योजन, ऊपर छ कला लांबा ।
पांचशे योजन पहोळा गजदंता, चारसें पांचशे ऊँचा...
मारी विनतडी...॥ १५ ॥

वन गिरिने परवत बहोळा, नदीयांओ घट घाट ।
किणविध आवुं सुगुण साहिबा, मारग विसमो वार...
मारी विनतडी...॥ १६ ॥

कंचनगिरि वखारा पर्वत, शत जोजन ऊँचा कहेवाय ।
बसें कंचनगिरि पंचशत ऊँचा, केम उलंघ्या जाय...
मारी विनतडी...॥ १७ ॥

भद्रशालवन पूरव पश्चिम, बावीश सहस कहेवाय ।
बसें पचास दक्षिण उत्तर, आवुं केणे उपाय...
मारी विनतडी...॥ १८ ॥

किहा मुज दक्षिण भरत क्षेत्र ने ,किहाँ पुष्कलावती जिनराज ।
ए मेलो किम होशे साहिब, तारण तरण जहाज...
मारी विनतडी...॥१९॥

निशदिन मारे तुंही आलंबन, वसीयो हृदय मोझार।
भवदुःख भंजन तुंही निरंजन, करुणारस भंडार...॥
मारी विनतडी...॥२०॥
मनवांछित सुख संपदा पूरो, पूरो मननी आशा।
खरतर हर्ष गुरु सुपसाए, सरूपचंद गुण गाया...
मारी विनतडी...॥२१॥
अगरचंदकी सरी जिनवरजी, तारो दीनदयाल।
नित्य नित्य वंदना होजो मारी, एही ज छे अरदास...
मारी विनतडी...॥२२॥
संवत् अढारसें एकवींशे, पोष वदी शुभ मास।
बीज दिन बुधवार अनोपम, जिनपद वंदन भाष...
मारी विनतडी...॥२३॥

(श्री सरूपचंदजी कृत...)

१४. ॥ अथ चउद राजलोक पूजा ॥

(राग : कबीर - दोहा)

धर्म जिणंद नमी करी, सदगुरु सीस नमाय ।
चउद लोक पूजा रचूं, सिमरी सारद माय ॥ १ ॥
तीर्थंकर के उपदिस से, गणधर रचना सार ।
आगम धर्म बताइया, भेद झाण[१] के चार ॥ २ ॥
ध्याता जास पसाय से, केवल नाण उपाय ।
सिद्ध बुद्ध परमातमा, जनम मरन मिट जाय ॥ ३ ॥
अप्रमत्त मुनिराय का, वर्तन मंगलकार ।
ध्यान धर्म में नित रमे, न भमे गति संसार ॥ ४ ॥

---

(१) ध्यान

आज्ञा[१] कष्ट[२] विपाक[३] का, चउथा पुन संस्थान[४] ।
चिंतन मन एकाग्रता, भेद कहें भगवान ॥ ५ ॥
आप्त वचन आज्ञा सही, राग दोस अरु मोह ।
कष्ट सहे बहु जीव वस, विचय अपाय सुबोह ॥ ६ ॥
कर्म शुभाशुभ भोगना, फल नाना परकार ।
चिंतन कर्म सभेद का, विचय विपाक विचार ॥ ७ ॥
स्थिति उत्पत्ति व्ययमयी,अंत आदि नहि जास।
आकृति चिंतन लोक की, पूजन विषय हि खास ॥ ८ ॥
अस्तिकाय पण हैं जहां, लोक नाम है तास ।
चउद राज जस मान है, अभिधा लोकाकास ॥ ९ ॥
मास्तर माणिक लालकी, विज्ञप्ति स्वीकार ।
रचना करि संक्षेप से, पूर्व सूरि अनुसार ॥ १० ॥
पूजा पूजा जानिये, सामग्री विस्तार ।
अथवा आठों द्रव्य से, निज शक्ति अधिकार ॥ ११ ॥

॥ अथ प्रथमा पूजा ॥

(राग : कबीर - दोहा)

कर कमरे धरि नर खडा, होवे पांव पसार ।
द्रव्य पूर्ण सब लोक का, जानो यह आकार ॥ १ ॥
ऊर्द्ध अधो तिरछा कहा, लोक मृदंग समान ।
वेत्रासन अरु झल्लरी, क्रम आकार पिछान ॥ २ ॥
गोथण सम बिच मेरु के, चार चार परदेश ।
आठ पएसी रुचक से, ऊर्द्धादि व्यपदेश[५] ॥ ३ ॥

---

(१) आज्ञाविचय (२) अपायविचय (३) विपाकविचय (४) संस्थानविचय (५) कथन

अष्टादश शत योजनो, तिरछा लोक कहाय ।
सात राज नव ऊन शत, योजन अधो मनाय ॥ ४ ॥
घनजल घनतन वात से, वेष्टित भूमी सात ।
रयणपहा पहली कही, जिन शासन विख्यात ॥ ५ ॥

(राग : मालकोश-मारा नाथनी वधाई वागे छे...)

जिनशासन जग सार आनंद भर जिन० अंचली ।
तीर्थंकर गणधर फरमाया, लोक स्वरूप उदार आ० ॥१॥
पृथ्वी पिंड एक लाख के ऊपर, योजन अस्सी हजार ॥२॥
ऊर्द्ध अधो एक सहसको टारी, भवनपति मध्यधार ॥३॥
दक्षिण उत्तर दो श्रेणि में, संख्या क्रम अवधार ॥४॥
आतम लक्ष्मी धर्म जिनेश्वर, वल्लभ हर्ष अपार ॥५॥

(राग : एक पंखी आवीने ऊडी गयो...)

दक्षिण चउतिस लाख है, उत्तर तीस मिलाय ।
संख्या असुरकुमार के, भवनों की मन भाय ॥ १ ॥
चउताली अरु चालिसा, संख्या नागकुमार ।
आठतीस चउतीस की, अग्र[1] सुपर्ण कुमार ॥ २ ॥
विद्युत चाली तीस है, अग्नि द्वीप कुमार ।
उदधि दिशा चउ मानिये, विद्युत के अनुसार ॥ ३ ॥
पंचाशत चालीस षट, वायु कुमार विचार ।
चत्वारिंशत तीस छै, संख्या स्तनितकुमार ॥ ४ ॥
सात कोडि बी सत्तरी, लाख भवन आवास ।
प्रति भवने जिन चैत्य को, नमन करो शुभ आस ॥ ५ ॥

---

[1] संख्या

(राग : ऐ मेरे वतन के लोगो / छु लेने दो नाजुक...)

तीर्थंकर गणधर देव नमो भवी प्राणी
नहीं ज्ञानी जग में और कोई इन सानी[1] ॥ तीर्थंकर...
वर्णन द्रव्यादि पदार्थ सार्थ कियो भारी,
उत्पाद स्थिति अरु नाश त्रिभंगी सारी ।
तेरसो नव्यासी कोडि भवन में जानो,
जिन प्रतिमा ऊपर साठ लाख भी मानो[2] ।
वंदन पूजन शुद्ध भाव करो हितमानी-नहीं० ॥ १ ॥
दश दक्षिण के दश उत्तर इंद्र को मानो,
ऋद्धि परिवार आदि शास्त्रों से जानो ।
ऊपर नीचे एक एक शत योजन टारी,
अडसय योजन में व्यंतर वास विचारी ।
व्यंतर दोय भेद वदे तीर्थंकर ज्ञानी-नहीं० ॥ २ ॥
पिशाच भूत जख रक्षस किन्नर कहिए,
किंपुरुष महोरग गंधर्व आठमा लहिए ।
अण पणपन्नी ऋषि भूतवादी[3] अरु कंदी,
महाकंदी कोहंड पतंग आठ ए छंदी ।
दो दो जस कुल बत्तीस इंद्र फरमानी-नहीं० ॥ ३ ॥
है संख्यातीता वाणवंतर आवासा,
उत्कृष्टा जंबूद्वीप समा है खासा ।
मध्यम परिमाण विदेह समा तस धारा,
छोटे में छोटा क्षेत्र भरत सम सारा ।
संख्यातीते जिन चैत्य वदे जिनवाणी-नहीं० ॥ ४ ॥

---

(१) बराबर (२) १३८९६०००००० (३) अणपन्नी, पणपन्नी ऋषिवादी, भूतवादी ।

अधोलोक में भवनपति नारक का वासा,
तिरछा लोके वंतर नर ज्योति प्रकासा ।
वैमानिक सुरगण और सिद्ध भगवंता,
सब ऊर्ध्वलोक में सिद्ध किया भव अंता ।
आतम लक्ष्मी हर्षे वल्लभ इम जानी-नहीं० ॥ ५॥

॥ काव्यम् ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,वरभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,जिनवरभवनानां भावतोहं नमामि ॥ १ ॥

॥ मंत्र ॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ परमपुरुषाय परमेश्वराय जन्मजरामृत्युनिवारणाय
अनन्तानन्तज्ञानशक्तये श्रीमद्देवाधिदेवाय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥

इति प्रथमा पूजा

॥ अथ द्वितीया पूजा ॥

(राग : कबीर - दोहा)

अधोलोक लोकांत से, एक राज परमान ।
तल ऊपर का सातमी, नरक कहे जिन भान ॥ १ ॥
इम सातों ही नरक के, ऊपर के तल सात ।
अष्टम अंत विमान के, स्वर्ग सुधर्मा जात ॥ २ ॥
नवमी अंत चतुर्थ के, लांतक दशमी जान ।
अष्टमांत एकादशी, बार बारमी मान ॥ ३ ॥
ग्रैवेयक के अंत में, तेरा राज कहंत ।
राज चउद लोकांत में, भाषे श्री भगवंत ॥ ४ ॥
एक राज की पृथु कही, चउद राज आयाम ।
त्रस जीवों के वास से, त्रस नाडी तस नाम ॥ ५ ॥

(राग : पीलू-बरवा अथवा-गिरिवर दर्शन विरला...)

जय जिनवचन जगत हितकारी, बोध करे भविजन दे उगारी ।
रत्न शर्करा और वालुका, पंक धूम तम महातमकारी ।
नरक सात अधिकाधिक होवे, दुःख किये जो अध महाभारी । जय० ॥ १ ॥
विविध वेदना वर्णन करते, सुयगड भगवती में गणधारी ।
धारी दया दोय भेदे भविजन, पारी शुद्ध होवे भव पारी । जय० ॥ २ ॥
तीस पचीस पंचदश अरु दश, तीन एक कमी पांच विचारी ।
लाख वास क्रम से छट्ठी में, सप्तमी पांच वास उरधारी । जय० ॥ ३ ॥
जीव असंख्य अतुल दुःख वेदी, परमाधार्मिक तीन[1] न चारी ।
वरण गंध रस फरस अनीठा, क्षेत्र वेदना महा अंधकारी । जय० ॥ ४ ॥
आतम लक्ष्मी प्रभु दर्शन से, पामे न जीव नरक अवतारी ।
हर्ष अनुपम श्रेणि चढते, होवे जीव वल्लभ शिव नारी । जय० ॥ ५ ॥

(राग : कबीर - दोहा)

तेर एक दश नव कहे, सात पांच तिग एक ।
सात नरक के पाथडे, क्रम से एह विवेक ॥ १ ॥
एक तीन सत सागरा, दश सत्तर बावीस ।
तेतीस उदधि सप्तमी, आयु कहे जगदीस ॥ २ ॥
हाथ सवा इकतीसका, उत्कृष्टा तनुमान ।
पहली नरके जानिये, ऊपर दुगुणा[2] ठान ॥ ३ ॥
चार कोश जिनवर कहे,धर्मा[3] अवधि ज्ञान ।
ऊपर ऊपर कीजिए, आध कोश की हान ॥ ४ ॥
भव पच्चय भवपूर्व का,नारक निज विरतंत ।
जाति स्मरणसुं जानते, इम भाषे भगवंत ॥ ५ ॥

---

(१) प्रथम की तीन नरक में परमाधार्मिक की वेदना होती है, आगे की चार में नही । (२) द्वितीयादि नरक में ६२।। हाथ, ३-१२५, ४-२५०, ५-५००, ६-१००० और ७ नरक में २००० हाथ की अवगाहना । उत्तर वैक्रिय सर्वत्र मूल से दुगुणी । (३) धर्मानामा पहली नरक में उत्कृष्ट अवधिज्ञान चार कोश का, जघन्य साढे तीन का । एवं २-३।।, ३।३-३, २।। । ४-२।।, २।५-२, १।। । ६-१।।, १।७-१, ०।। कोश का ।

(राग : माता मरुदेवानो नंद / तेरा-मेरा प्यार अमर...)

भवी तुमे धरो हृदय में जी.......
श्री वीतराग के वचन सुहंकर धरो हृदय में जी ।
अति आरंभ परिग्रह अधिका, करना मांसाहार ।
पंचेंद्रि की हत्या करनी, हेतु नरक के चार-भवी० ॥१॥
चक्षुनिमीलन मात्र नहीं सुख, दुःख ही दुःख अपार ।
जिन जन्मादि समये किंचित्, पामे शर्म[१] विचार ॥२॥
नरकायु बंधन के पीछे, कीना सुकृत सार ।
पूर्व भवे वो नरक से निकसी, पामे नर अवतार ॥३॥
चक्री राम हरि तीर्थंकर, केवली मुनि सागार ।
सम्यगदृष्टि क्रम से पदवी, सातों का अधिकार[२] ॥४॥
अंते कर्म करी क्षय आतम, परमातम पद धार ।
आतमलक्ष्मी प्रभुता प्रगटें, वल्लभ हर्ष अपार ॥ ५॥

॥ काव्यम् ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,वरभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,जिनवरभवनानां भावतोहं नमामि ॥ १ ॥

॥ मंत्र ॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ परमपुरुषाय परमेश्वराय जन्मजरामृत्युनिवारणाय
अनन्तानन्तज्ञानशक्तये श्रीमद्देवाधिदेवाय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥

इति द्वितीया पूजा

---

(१) सुख (२) पूर्वजन्म के किये सुकृत के प्रताप से यदि होवे तो प्रथम नरक का निकला जीव चक्रवर्त्ति हो सकता है । १-२ का निकला बलदेव वासुदेव । १-२-३ का तीर्थंकर । १-२-३-४ का सामान्य केवली । १-२-३-४-५ का मुनि । १-२-३-४-५-६ का देशविरति । सातों का निकला सम्यग्दृष्टि ।

॥ अथ तृतीया पूजा ॥

(राग : कबीर - दोहा)

तिरछा द्वीप समुद्र हैं, संख्यातीत उदार ।
समय अढी सागर समा, ज्ञानी ज्ञान विचार ॥ १ ॥
मध्ये जंबू द्वीप है, जोजन लख विस्तार ।
लवणोदधि दो लाख का, वलयाकृति तस लार ॥ २ ॥
चार लाख का धातकी, कालोदधि अड लाख ।
पुष्कर सोलां लाख का, दुगुणा पुष्कर भाख ॥ ३ ॥
द्वीप उदधि इम सारिखा, नाम दुगुण परमान ।
वरुण खीर घृत इक्षुवर, नंदीश्वर अभिधान ॥ ४ ॥
अंतिम द्वीप समुद्र है, रमण स्वयंभु नाम ।
एक[१] राज का पृथु कहा, एक राज आयाम ॥ ५ ॥

(राग : तुम दिल की धडकन में...)

जिनवर पूजा सुरतरु कंद ......
जंबूद्वीप घातकी खंड सोहे, पुष्करवर का अर्ध गहंद ।
द्वीप अढी नर क्षेत्र कहावे, लाख[२] पैंतालीस मान लहंद-जिन० ॥ १ ॥
देव[३] उत्तर कुरु हैम[४] हैरण्ये, हरि[५] वर्ष रम्यक निज छंद ।
दो दो[६] घातकी पुष्कर युगलिक, तीस अकर्म भूमि हुलसंद-जिन० ॥२॥

---

(१) इसका मतलब यह समझना कि स्वयंभुरमण समुद्र के एक किनारे से दूसरी तरफ के किनारे तक का माप एक राज प्रमाण होता है (२) एक लाख योजन का जंबूद्वीप थाली-चंद्रमा के आकार का मध्य में, उसकी चारों ओर फिरता दो लाख योजन का लवण समुद्र-उसकी चारों ओर फिरता चार लाख योजन का धातकी खंड-उसकी चारों और फिरता आठ लाख योजन का कालोदधि समुद्र-उसकी चारों ओर फिरता सोलां लाख योजन का पुष्करवर द्वीप सो आधा आठ लाख योजन फिरता लेना इस तरह ४५ लाख योजन (३) देवकुरु उत्तरकुरु (४) हैमवंत हैरण्यवंत (५) हरिवर्ष रम्यक्वर्ष । (६) धातकीखंड और अर्ध पुष्करवर में दो देवकुरु दो उत्तर कुरु इत्यादि सब दो दो जानने एवं ६+१२+१२=२० ।

पांच भरत अरु पांच ऐरावत, पांच विदेह क्षेत्र सुखकंद[१] ।
जगनायक जगवत्सल जिनवर,जगजीवन उपकार करंद-जिन० ॥ ३ ॥
भरतैरावतकी दश विजयां, एकसो साठ विदेह मिलंद ।
उत्कृष्टा विचरंता लाभे, एकसो सत्तरि श्रीजिनचंद-जिन० ॥ ४ ॥
आतम लक्ष्मी प्रगट करी सब, तारन तरन को बिरुद धरंद ।
प्रभु उपदेश लहे भवी आतम,लक्ष्मी वल्लभ हर्ष अमंद-जिन० ॥ ५ ॥

(राग : कबीर - दोहा...)

ऊंचा[२] योजन लाख का, एक सहस भू माह ।
ऊपर एक हजार का, नीचे दस अवगाह ॥ १ ॥
भद्रसाल[३] नंदन तथा, सुमनस पंडक नाम ।
चारों वन में चैत्य हैं, कीजे तास पणाम ॥ २ ॥
पांडु शिला पूरव दिशा, पांडू कंबल याम[४] ।
रक्त रक्त कंबल शिला, पश्चिम उत्तर धाम ॥ ३ ॥
दो दो पूरव पश्चिमे, दक्षिण उत्तर एक ।
सिंहासन ते ते दिशा, होवे जिन अभिषेक ॥ ४ ॥
मंदर[५] दो दो घातकी, पुष्कर वर में जान ।
योजन पंचासी सहस, ऊंचा है जस मान ॥ ५ ॥

---

(१)एक जंबूद्वीप में दो धातकी खंड में और दो अर्ध पुष्करवर द्वीप में एवं ५ भरत ५ ऐरावत और ५ विदेह कुल १५ कर्मभूमि । (२)मेरु पर्वत एक हजार योजन जमीन में और ९९ हजार योजन बहार एवं एक लाख योजन ऊंचा और विस्तार में ऊपर एक हजार योजन और नीचे दश हजार योजन तथा मूल में १०,०९० योजन कुछ अधिक ११/१० पोहला-गोलाकार है । (३) समभूतला पृथिवी में भद्रशाल वन मेरु के पूर्व पश्चिम २२-२२ हजार और उत्तर दक्षिण अढाईसो अढाईसो योजन है । भद्रशाल वनसे ५०० योजन ऊंचा मेरु की चारों ओर फिरता वलयाकार नंदन वन है । यहां से साढी बासठ हजार योजन ऊंचे सोमनस नामा वन है और उससे ३६ हजार योजन ऊंचे मेरु के शिखर पर पंडक नामा वन है । चारों वन में पूर्वादि चारों दिशा में एक एक के हिसाब चार चार सिद्धायतन है । पंडक वन के मध्य में चालीस योजन की ऊंची चूलिका है उसके ऊपर मध्यभाग में एक सिद्धायतन है । पंडक वन में चार शिला पूर्वादि दिशा में हैं उन पर सिंहासन पूर्व पश्चिम में दो दो हैं जिन पर पूर्व महाविदेह और पश्चिम महाविदेह के तीर्थंकरो का जन्माभिषेक होता है । दक्षिण और उत्तर की पांडुकंबल और रक्तकंबल शिला पर एक एक सिंहासन है जिस पर क्रम से भरत और ऐरवत के तीर्थंकरों का जन्माभिषेक होता है (४)दक्षिण (५)मेरुपर्वत ।

(राग : मुक्ति मले के ना मले...)

जन्मोत्सव जिन राय रे, होवे मेरु शिखर पे.....
भरतैरावत एक समय जिन, जन्मे दश सुखदाय रे ॥ १ ॥
एक समय उत्कृष्टा विदेहे, वीस जिनागम गाय रे ॥ २ ॥
एक एक दक्षिण उत्तर में, पूर्व पश्चिम दो ठाय रे ॥ ३ ॥
ओछव करि हरि बहु परिवरिया, दीप नंदीसर जाय रे ॥ ४ ॥
आतम लक्ष्मी वल्लभ प्रभु की, पूजा हर्ष मनाय रे ॥ ५ ॥

॥ काव्यम् ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,वरभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,जिनवरभवनानां भावतोहं नमामि ॥ १ ॥

॥ मंत्र ॥ - ॐ ह्रीँ श्रीँ परमपुरुषाय परमेश्वराय जन्मजरामृत्युनिवारणाय अनन्तानन्तज्ञानशक्तये श्रीमद्देवाधिदेवाय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥

इति तृतीया पूजा

॥ अथ चतुर्थी पूजा ॥

(राग : कबीर - दोहा...)

जंबू द्वीपसु आठमा, नंदीसर अति सार ।
इंद्रादिक उत्सव करे, जिन शासन जयकार ॥ १ ॥
पर्वत दधिमुख सोल हैं, अंजन पर्वत चार ।
द्वात्रिंशत रतिकर मिली, बावन चैत्य विचार ॥ २ ॥
आठ रुचक कुंडलयुता, साठ जिनालय चार ।
द्वार और सब जिनधरा, तीन तीन निरधार ॥ ३ ॥
अष्टोत्तर शत मध्य में, चार दार की सोल ।
इम इगसय चउवीस हैं, जिन पडिमा नहि मोल ॥४॥
जिनघर तीन दुआर की, जानो पडिमा बार ।
इम इगसय अरु वीस का, सिद्धांते अधिकार ॥ ५ ॥

(राग : आजा रे, मै तो कब से खड़ी...)

सुरासुर महा उत्सव करता...
दीप[1] नंदीसर आय सुरासुर महा उत्सव करता ।
जिन कल्याणक तीन चौमासे, पर्युषणाचरता ।
करी अठाइ महोत्सव भावे, पुण्य रमा[2] वरता ॥ १ ॥
पूर्व अंजन गिरि शक्र उत्तर में, ईशानेंद्र करता ।
दक्षिण पश्चिम चमर बलींदर, उत्सव चित धरता ॥ २ ॥
लोकपाल दधिमुख गिरि उत्सव, करता अघ जरता ।
व्यंतर ज्योतिषि आदि सुरासुर, रतिकर अनुसरता ॥ ३ ॥
राजधानी सोलां सोलां चैत्य, उत्सव दुःख हरता ।
शक्रेशान इंद्राणी परिकर, आतम ऊधरता ॥ ४ ॥
जंघा विद्याचारण मुनिवर, यात्रानंद भरता ।
आतम लक्ष्मी हर्षे वल्लभ, भव सागर तरता ॥ ५ ॥

(राग : कबीर - दोहा...)

होवे नहि नरखेत के, बाहिर वस्तु सुभाव ।
मेघ नदी द्रह मेघ के, गर्जारव का भाव ॥ १ ॥
जन्म मरण नर मात्र का, तीर्थंकर बलदेव ।
चक्री गति शशि सूर की, गणधर वासुदेव ॥ २ ॥
समय स्थिति दिन रात की, बादर आग निधान ।
खाण ग्रहण होवे नहि, विजली गर्भाधान[3] ॥ ३ ॥
कर्म भूमि पंदर सही, तीस अकर्म मिलाय ।
छप्पन[4] अंतर द्वीप ए, इगसय एक कहाय ॥ ४ ॥
दोय भेद गर्भज कहे, एक छमोछम जान ।
नर क्षेत्रे उपदेश ए, भाषे श्री भगवान ॥ ५ ॥

---

(१) नंदीश्वर द्वीप की विस्तार सहित हकिकत नंदीश्वर द्वीप की पूजा में है। (२) लक्ष्मी (३) मनुष्य संबंधी (४) हेमवंत और शिखरी जंबूद्वीपगत इन दोनों पर्वतों के दोनों किनारे पर दो दो दाढा के समान विभाग बढ़ा हुआ लवण समुद्र में गया है, उन पर सात सात द्वीप होने से कुछ छपन्न होते हैं। लवण समुद्र के पानी में होने से अंतरद्वीप कहे जाते हैं। इनमें रहनेवाले मनुष्य भी युगलिक कहे जाते हैं। इनकी आयु पल्योपम का असंख्य भाग। देहमान ८०० धनुष। पसली ६४। आहारेच्छा एकान्तरे। संतान पालन मर्यादा ७९ दिन। एवं १५ कर्म भूमि, ३० अकर्म भूमि, ५६ अंतर द्वीप कुल १०१ मनुष्योत्पत्ति स्थान। १०१ गर्भज पर्याप्ता, १०१ गर्भज अपर्याप्ता और १०१ सन्मुर्च्छम मिलाकर ३०३ मनुष्य के भेद कहे जाते हैं।

(राग : दिल लूटने वाले जादुगर...)

(राग : कबीर - दोहा...)

धन धन उपदेशक भगवान, भवोदधि पार लगानेवाले...
नरक्षेत्रे श्री भगवान, नरक्षेत्रे केवलज्ञान ।
नरक्षेत्रे पद निरवान, सुनो प्रभु के गुण गानेवाले ॥ १ ॥
एकसो सित्तेर जगनाथ, विचरे उत्कृष्टे साथ ।
दश[1] वीस जघन्य सनाथ, प्रभु भवपार लगानेवाले ॥ २ ॥
सीमंधर[2] आदि ईश, वर्त्तमान विदेहे वीश ।
उपदेश करे जगदीश, भवि संसार मिटानेवाले ॥ ३ ॥
दो कोटि केवलधार, दो कोटि साधु हजार ।
जघन्य विदेह मझार, प्रभु के ध्यान लगानेवाले ॥ ४॥
निज आतम लक्ष्मी काज, सेवे हर्षे जिनराज ।
मुक्ति वल्लभ शिरताज, प्रभु आतम पद पानेवाले ॥ ५॥

॥ काव्यम् ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,वरभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,जिनवरभवनानां भावतोहं नमामि ॥ १ ॥

॥ मंत्र ॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ परमपुरुषाय परमेश्वराय जन्मजरामृत्युनिवारणाय
अनन्तानन्तज्ञानशक्तये श्रीमद्देवाधिदेवाय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥

इति चतुर्थी पूजा

---

(१) "सत्तरिसयमुक्कोसं जहन्न वीसा य दस य विहरंति" (प्रवचन सारोद्धार)।

(२) सीमन्धरं स्तौमि युगन्धरञ्च, बाहुं सुबाहुं च सुजातदेवम् । स्वयम्प्रभं श्रीवृषभाननाख्य-मनन्तवीर्यञ्च विशालनाथम् ॥ १ ॥ सूरप्रभं वज्रधरञ्च चन्द्राभनं नमामि प्रभुभद्रबाहुम् । भुजङ्गनेमिप्रभतीर्थनाथा-वधेश्वरं श्रीजिनवीरसेनम् ॥ २ ॥स्तवीमि च महाभद्रं, श्री देवयशसं तथा । अर्हन्तमजितवीर्यं, वन्दे विंशतिमर्हताम् ॥ ३ ॥ (लोकप्रकाश)

॥ अथ पंचमी पूजा ॥

(राग : कबीर - दोहा....)

सातसो नवति ऊपरे, तारा वृंद विमान ।
सम भूतल से आठसो, योजन सूर्य विमान ॥ १ ॥
अस्सी योजन चंद्रमा, ऋक्ष है योजन चार ।
चार-तीन बुध शुक्र है, तीन गुरु मन धार ॥ २ ॥
मंगल शनि तिग तिग कहा, इग सय दस सरवार[१] ।
नरक्षेत्रे सब चर कहे, बाहिर कहे अचार ॥ ३ ॥
ग्यारांसो एक विंशति, ग्यारांसो अरु ग्यार ।
योजन मेरु अलोक से, चर थिर का परचार ॥ ४ ॥
शशि से रवि जलदी चले, रवि से ग्रहकी चाल ।
ग्रह से रिख रिख से कही, शीघ्र हि तारा चाल ॥ ५ ॥

(राग : मेरा जुता है जापानी...)

उपदेश उदारा जग हितकारा करते श्री भगवान ।
भविजन मन धारा पाप पखारा
शिव सुखकारा करते श्री भगवान । (अंचली)

नवसो ऊपर नवसो नीचे, तिरछा लोक विचार ।
ज्योतिष व्यंतर देव असंखा, आगम बहु विस्तार ॥ १ ॥

रवि शशि दो दो जंबू द्वीपे, लवण समुद्रे चार ।
धातकी बार कालोदधि कहिये, बेतालीस परिवार ॥ २ ॥

---

(१) समभूतला पृथिवी से ७९० योजन उपरांत ११० योजन में ज्योतिषचक्र रहता है । ७९० योजन पर तारा, तारा से दश योजन ऊपर अर्थात् समभूतला से ८०० योजन सूर्य, सूर्य से ८० योजन समभूतला से ८८० योजने चंद्र, चंद्र से चार समभूतला से ८८४ योजने नक्षत्र, नक्षत्र से चार योजन समभूतला से ८८८ योजने बुध, बुध से ३ योजन समभूतला से ८९१ योजने शुक्र, शुक्र से ३ समभूतला से ८९४ योजने बृहस्पति, बृहस्पति से ३ समभूतला से ८९७ योजने मंगल और मंगल से ३ समभूतला से ९०० योजने शनि का विमान । एवं ११० योजन ।

पुष्कर अर्ध बहुत्तर सब मिल, इकसो बत्तीस होय ।
चंद्र सूर्य ग्रह नक्षत्र तारा, ज्योतिष पण विध जोय ॥ ३ ॥
ग्रह अट्ठासी नक्षत्र अडवीस, कोडाकोडी तार ।
सहस छासठ नवसो पंचोतेर, एक चंद्र परिवार ॥ ४ ॥
संख्यातीत जिनालय सोहे, संख्यातीत जिनंद ।
आतम लक्ष्मी वल्लभ हर्षे, पूजे सब सुरवृंद ॥ ५ ॥

(दोहा)

पांच मेरु जिन चैत्य हैं, पंचासी परमान ।
प्रतिमा दो सय सहस दस, वंदो धरि सनमान ॥ १ ॥
कांचन गिरि शत जानिए, सिद्धायतन हजार ।
एक लाख नमिए विभू, ऊपर वीस हजार ॥ २ ॥
गजदंता गिरि वीस है, सिद्धायतन जिनंद ।
दोय सहस अरु चारसो, नमन करो जिनचंद ॥ ३ ॥
यमकाचल दश जिन धरा, जिन पडिमा शतबार ।
पांच जिनालय चित्र गिरि, पडिमा शत दो चार ॥ ४ ॥
तीस वर्षधर मानिए, तीस जिनालय सार ।
छत्तीससो मन शुद्धसु, जिनवर बिंब जुहार ॥ ५ ॥

(राग : लावणी-संग नर परनारी हरना-देशी...)

नमन भवि शाश्वत जिन करना
प्रात समय नित्य ऊठ अपूरव पुण्य कोश[१] भरना
नमन भवि शाश्वत जिन करना । अंचली ॥
पांच प्रासाद भवि जानो, पर्वत नाम विचित्र बिंब षटशत जिनवर मानो ।
गिरि इषुकार चार कहिए, चारसो अस्सी बिंब नमन कर यात्रा फल लहिए ।
वखारा पर्वत पुन गहिए, अस्सी जिन घर दीपते, छन्नुसो जिन देव ।
नमन करे भवि अघ हरे, देव करे जस सेव ।
जिनागम में है यह वरना-प्रात० ॥ १ ॥

---

(१) भंडार ।

वृत्त वैताढ्य वीस देहरा, चौवीससो जिन बिंब दीर्घ वैताढ्य शिखर सेहरा ।
एकसो सत्तरि दिल लाना, जिन घर जिनवर बिंब चारसो वीस सहसमाना ।
कूट दिग्गज नामे गाना, चालीस जिन घर चालीसा, प्रतिमा का परमान ।
चार सहस अरु आठसो, धरिए नित्य नित्य ध्यान ।
ध्यान शुभ जिनवर का धरना-प्रात० ॥ २ ॥

कुरु दश जिन घर दश सोहे, प्रतिमा एक हजार दोय शत ऊपर मन मोहे ।
जंबू[1] आदि तरु दश धारी, मुख्य वृक्षमें एक एकसो आठ हैं परिवारी ।
आठ दिशि आठ मंदिर भारी, इम इकतरु प्रति जानिए, जिन घर इकसो सतार ।
एकादश शत सत्तरि, जिन घर दश तरु धार ।
धरो जिन प्रतिमा का सरना-प्रात० ॥ ३ ॥

लाख इकचाली सहस वंदो, चारसो ऊपर और जिनेसर शिवसुख तरुकंदो ।
तीनसो अस्सी कुंड सारा, पणतालीस हजार छसो जिन बिंब मनोहारा ।
महानदी कुंड सयरि धारा, चउरासी शत बिंब हैं, अस्सी द्रह जिनगेह ।
छन्नुसो जिन बिंब को, वंदो नामी देह ।
मिटे संसार जन्म मरना-प्रात० ॥ ४ ॥

चैत्य नरक्षेत्र कहे सारे, मानुषोत्तर चार चारसो अस्सी बिंब धारे ।
साठ अठ नंदीसर नंदे, प्रतिमा आठ हजार तीनसो अडसठ सुरवंदे ।
रुचक कुंडल चउ चउ छंदे, चारसो छन्नु जिनवरा, दोनों स्थान विचार ।
शाश्वत तिरछा लोक में, आतम लक्ष्मी उदार ।
हर्ष वल्लभ जिन पग परना-प्रात० ॥ ५ ॥

---

(१) जंबू, धातकी, पद्म, महाघातकी और महापद्म तथा पांच शाल्मलि नामा कुल दश महावृक्ष अढाई द्वीप में माने जाते हैं । प्रति वृक्षे ११७ जिनालय हैं । एक मुख्य वृक्षे, १०८ मुख्य वृक्ष के चारों तर्फ परिवार रूप वृक्षे और चार दिशा चार विदिशा एवं आठ दिशाओं के शिखरों पर एक एक जिनालय । कुल ११७ । दश वृक्षों के ११७० ।

॥ काव्यम् ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,वरभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,जिनवरभवनानां भावतोहं नमामि ॥ १ ॥

॥ मंत्र ॥ - ॐ ह्रीँ श्रीँ परमपुरुषाय परमेश्वराय जन्मजरामृत्युनिवारणाय अनन्तानन्तज्ञानशक्तये श्रीमद्देवाधिदेवाय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥

इति पंचमी पूजा

॥ अथ षष्ठी पूजा ॥

(राग : कबीर - दोहा...)

तीरछा आदि लोक से, ऊर्ध लोक अति चंग ।
देव अनेक प्रकार के, सुख भोगे मन रंग ॥ १ ॥
राज देढ सौधर्म है, अढि माहेंद्र विचार ।
चउ पण सहस्सारच्चुआ, सग लोकांते धार ॥ २ ॥
लोक मध्य मृत लोक है, ऊर्ध मध्य ब्रह्म लोक ।
चउथी पांचमी नारकी, मध्य मध्य अधो लोक ॥ ३ ॥
अधो लोक के मूल में, सात राज विस्तार ।
पांच ऊर्ध के मध्य में, एक अंत[1] मृत[2] धार ॥ ४ ॥
प्रमाणांगुलसु नीपना, योजन कोडाकोड ।
संख्यातीता राज में, जिनवर वचने जोड ॥ ५ ॥

(राग : कसमे वादे प्यार वफा सब...)

कहा केवल ज्ञानी विचारा
सुख भोगत सुर मनोहारा । अंचली ॥
कल्प बार कल्पातीत चौदां, सुर षडविंश प्रकारा ।
इंद्रादि मर्यादा कल्पे, अन्यत्र[3] नहीं अधिकारा ॥ १ ॥

---

(१) ऊर्ध्वलोक के अन्त में (२) मृत्युलोक अर्थात् तिरछालोक । (३) कल्पातीते ।

सौधर्मा[1] ईशान दूसरा, तीसरा सनत कुमारा ।
माहेंद्र ब्रह्म लांतक छट्ठा, शुक्र सातमा धारा ॥ २ ॥
सहस्त्रार आनत अरु प्राणत, आरण अच्युत बारा ।
नव ग्रैवेयक त्रिक त्रिक भेदे, अनुत्तर पांच उदारा ॥ ३ ॥
दो[2] सागर दो सागर अधिका, सात सागर अवधारा ।
सात सागर अधिका माहेंद्रे, ब्रह्म लोक दश सारा ॥ ४ ॥
छट्ठे चउद सातमे सत्तर, अष्टादश सहसारा ।
आतम लक्ष्मी पुण्य प्रभावे, वल्लभ हर्ष अपारा ॥ ५ ॥

(राग : कबीर - दोहा...)

एक[3] एक सागर वधे, ग्रैवेयक परजंत ।
तेतिस पांच अनुत्तरे, भाषे श्री अरिहंत ॥ १ ॥
इंद्र सामानिक देवता, गुरु स्थानीया देव ।
बाह्य अभ्यंतर मध्य ए, पर्षद तीन के देव ॥ २ ॥
इंद्र देहरक्षक तथा, लोकपाल हैं चार ।
सात कटक के देवता, देव प्रजा विस्तार ॥ ३ ॥
किंकर किल्बिष भेद से, देव भेद दश जोय ।
ज्योतिष व्यंतर में गुरु लोकपाल नवि होय ॥ ४ ॥
आयु सागर मान से, पखवाडे ऊसास ।
वर्ष सहस उतने गये, भोजन का आयास ॥ ५ ॥

(देशी-जिन राजा ताजा मल्लि बिराजे भोयणी गाम में अथवा केसरिया थासुं)

ज्ञानी महाराजा वर्णन किया रे देवलोक का
लेश्या स्थिति दीप्ति सुख ज्ञाने, एक से एक सवाया ।
मान ममत्वे हीना हीना, क्रम से सर्व मनाया रे ॥ १ ॥
सिद्धायतन विमाने पूजे, सुर सुरपति जिनराया ।
पूजन विधि विस्तार अतिशय, रायपसेणी गाया रे ॥ २ ॥
बत्तीस लाख अठावीस बारां, लाख आठ लख चारा ।
छट्ठे स्वर्गे सहस पचासा, सप्तम चाली हजारा रे ॥ ३ ॥
छ हजार अष्टम देवलोके, नव दशमे शत चारा ।
ग्यार बारमे तीनसो कहिए, मान विमान आधारा रे ॥ ४ ॥
देव प्रायः सुख साता भोगी, नहीं रोगी नहीं सोगी ।
आतम लक्ष्मी हर्ष अनुपम, पामे वल्लभ जोगी रे ॥ ५ ॥

॥ काव्यम् ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,वरभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,जिनवरभवनानां भावतोहं नमामि ॥ १ ॥

॥ मंत्र ॥ - ॐ ह्रीँ श्रीँ परमपुरुषाय परमेश्वराय जन्मजरामृत्युनिवारणाय अनन्तानन्तज्ञानशक्तये श्रीमद्देवाधिदेवाय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥

इति षष्ठी पूजा ॥

॥ अथ सप्तमी पूजा ॥

(राग : कबीर - दोहा...)

द्वीप अरुणवर वेदीसु, उदधि अरुणवर जाय ।
सहस बयाली योजने, प्रगटे तम अपकाय ॥ १ ॥
ग्यारांसो योजन गये, तिरछा हो विस्तार ।
ब्रह्मलोक जावे सही, स्वर्ग आवरी चार ॥ २ ॥
प्रतर तीसरा ब्रह्म का, नाम अरिष्ट विमान ।
कृष्णराजी दो दो कहीं, चार दिशा परमान ॥ ३ ॥
कृष्णराजी के अंतरे, आठ विमान समाय ।
नवमा मध्ये जानिए, लोकांतिक समुदाय ॥ ४ ॥
जिन दीक्षा के समय में, आते ए नव देव ।
जय जय नंदा ऊचरी, करते प्रभु की सेव ॥ ५ ॥

---

(१) देवलोक के नाम । (२) क्रम से आयु प्रमाण । (३) नवमे देव लोक से एक एक सागरोपम बढाना यावत् २१ मे देव लोक में (अर्थात् नवमे ग्रैवेयक में) ३१ सागरोपम

(राग : सोहनी-सिद्धगिरि तीरथ पर जानाजी...)

जिनराज पूजन फल पानाजी
पानाजी निरवानाजी जिनराज० ॥ अंचली ॥

सारस्वत आदित्यक वह्नी । वरुण गर्दतोय मानाजी-जिन० ॥ १ ॥

तुषित अव्याबाध कहावे । आग्नेय रिष्ट मिलानाजी-जिन० ॥ २ ॥

ब्रह्मलोक समीपे वासा । तिण लोकांतिक गानाजी-जिन० ॥ ३ ॥

अथवा लोक संसार के अंते । एकावतारी कहानाजी-जिन० ॥ ४ ॥

हित सुख जोग मोक्ष परलोके । साहायक बन आनाजी-जिन० ॥ ५ ॥

आतम लक्ष्मी हर्षे वल्लभ । जिन आगम फरमानाजी-जिन० ॥ ६ ॥

(दोहा...)

सुदर्शन[1] सुप्रबुद्ध है, नाम मनोरम जान ।
सर्वभद्र[2] सुविशाल है, और सुमन अभिधान ॥ १ ॥
सुमनस[3] प्रीतिकर तथा, नवमा आदित्य नाम ।
पांच अनुत्तर मानिए, नाम ठाम अभिराम ॥ २ ॥
विजय और विजयंत है, जयंत अपराजीत ।
सरवारथ सिध पांच ए, सम्यग्दृष्टि पुनीत ॥ ३ ॥
धर्म ध्यान ध्याता मुनि, तद् भव मोक्ष न जाय ।
तो इन स्वर्गे ऊपजी, नर भव उत्तम आय ॥ ४ ॥
आराधन चारित्र का, करके कर्म खपाय ।
होवे निर्मल आतमा, जन्म मरण मिट जाय ॥ ५ ॥

---

(१) नव ग्रैवेयक की प्रथम त्रिक (२) दूसरी त्रिक (३) तीसरी त्रिक।

(राग : चार दिवसना चांदरणा पर...)

अपूरव स्वर्ग का वर्णन, जिनेश्वर देव फरमावे ।
अनुत्तर देव द्वि[1] चरमा, एक चरमा[2] पंचम[3] थावे ॥ १ ॥
प्रथम त्रिक एकसो ग्यारां, द्वितीय एक सयं सत गावे ।
तृतीय एकसो अनुत्तर में, जिनालय पांच बतलावे ॥ २ ॥
चउरासी लाख सत्ताणु, सहस तेवीस कुल थावे ।
ऊर्धलोके जिनालय में, नमो जिन बिंब शुभ भावे ॥ ३ ॥
कोटि एकसो बावन लक्षा, चौरानु सहस गिनवावे ।
चउताली सातसो साठे[4], सुनी भवि चित्त हुलसावे ॥ ४ ॥
ब्रह्म पर्यंत संन्यासी, ज्योतिषि तापसी जावे ।
तिरी पंचेंद्री सहसारे, श्रावक अच्युत सुर थावे ॥ ५ ॥
स्वलिंगी मिथ्यादृष्टि जे, सामाचारी में मन लावे ।
अंत्य ग्रैवेयके जावे, धर्म साधु के परभावे ॥ ६ ॥
पूर्वधर पूर्ण ब्रह्मादि, सिद्ध सर्वार्थ गति पावे ।
आतम लक्ष्मी भवांतर में, प्रगट वल्लभ हर्षावे ॥ ७ ॥

॥ काव्यम् ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,वरभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,जिनवरभवनानां भावतोहं नमामि ॥ १ ॥

॥ मंत्र ॥ - ॐ ह्रीँ श्रीँ परमपुरुषाय परमेश्वराय जन्मजरामृत्युनिवारणाय अनन्तानन्तज्ञानशक्तये श्रीमद्देवाधिदेवाय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥

इति सप्तमी पूजा

---

(१) दो भव। (२) एक भव। (३) सर्वार्थ सिद्ध। (४) १५२९४४४७६० जिनबिंब। चैत्य ८४९७०२३। जिनमें बारां देवलोक के ८४९६७०० चैत्य में सभा मंडपसहित १८० जिन बिंब के हिसाब से १५२९४०६०००। नवग्रैवेयक और पांच अनुत्तर विमान के ३२३ चैत्य में सभामंडप के न होने से १२० जिनबिंब के हिसाब से ३८७६० जिनबिंब हैं।

॥ अथ अष्टमी पूजा ॥

(राग : कबीर - दोहा...)

सरवारथ सिध ऊपरे, ऊंचे योजन बार ।
सिद्धशिला पृथिवी कही, नाम इषत् प्राग्भार ॥ १ ॥
अर्जुन सोना सारखी, अमल फटक सम जोय ।
पैंताली लख योजनी, लंबी पिहुली होय ॥ २ ॥
मोटी योजन आठ है, मध्य अंत पर[1] माख[2] ।
उलटे छत्राकार से, गणधर आगम साख ॥ ३ ॥
सिद्ध शिला को लंघ के, तीन कोश उपरंत ।
भाग छठे इक कोश के, रहते सिद्ध भगवंत ॥ ४ ॥
सिद्ध अनंते हो गये, होंगे और अनंत ।
स्थान न रोके ज्योति में, ज्योति एक मिलंत ॥ ५ ॥

(राग : पायोजी मैने रामरतन धन पायो)

भविकजन ! पूजन करो सुख धाम ॥ अंचली ॥
अष्ट कर्म को दूर करी रे, सिद्ध किये निज काम ॥ १ ॥
दुख हरी सुखमय बनी रे, रमते आतम राम ॥ २ ॥
जन्म नहीं मरना नहीं रे, रोग न सोग न नाम ॥ ३ ॥
सत चित आनंद रूप धरी रे, अक्षय सुख विसराम ॥ ४ ॥
आतम लक्ष्मी हर्ष वरी रे, वल्लभ शिव सुख ठाम ॥ ५ ॥

(दोहा)

स्खलित अलोकाकाश में, लोकाग्रे कियो वास ।
देहादि यहां छोरके, शाश्वत वहां निवास ॥ १ ॥
मित्र नहीं वैरी नहीं, नहि संयोग वियोग ।
भूख नहीं तरषा नहीं, नहीं विषय रस भोग ॥ २ ॥

---

(१) पांख (२) मक्षिका-माखी।

द्रव्य प्राण नहि सिद्ध में, प्राण भाव हैं चार ।
ज्ञान सौख्य जीवित तथा, वीर्य अनंता धार ॥ ३ ॥
राजा नहि परजा नहीं, नहि ठाकुर नहि दास ।
सुख सरिखा सब जीव को, सबका अविचल वास ॥ ४ ॥
शब्द रूप रस गंध नहि, नहीं फरस नहि वेद ।
गुरु चेला नहि मोक्ष में, नहीं वृद्ध लघुखेद ॥ ५ ॥

(राग : श्यामकल्याण)

सेवो भविजन प्रभु जग उपकारी-सेवो० अंचली ॥
पंदरां भेदे सिद्ध कहावे, पूर्व अवस्था धारी ॥ १ ॥
अचल महोदय ब्रह्मपद लीना, आवागमन निवारी ॥ २ ॥
सुख की उपमा जग में न होवे, अनुभव ज्ञान विचारी ॥ ३ ॥
हृदय कमल कांति प्रभु आवे, हंस[1] होवे भवपारी ॥ ४ ॥
आतम लक्ष्मी प्रभुता प्रगटे, वल्लभ हर्ष अपारी ॥ ५ ॥

॥ काव्यम् ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,वरभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ।
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां,जिनवरभवनानां भावतोहं नमामि ॥ १ ॥

॥ मंत्र ॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ परमपुरुषाय परमेश्वराय जन्मजरामृत्युनिवारणाय
अनन्तानन्तज्ञानशक्तये श्रीमद्देवाधिदेवाय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥

इति अष्टमी पूजा

---

(१) आत्मा।

(कलश)

(राग : सोने जैसा रंग है तेरा...)

पूजो भवी जीव जिनचंदा, होवे शिवसुख आनंदा ।
कटे भ्रमजाल का फंदा, मिटे जरामरण दुख दंदा ॥ १ ॥
तपागच्छ नाम दीपाया, श्री विजयानंदसूरि राया ।
न्यायांभोनिधि बिरुद पाया, श्री आत्माराम जग गाया ॥ २ ॥
विजय लक्ष्मी गुरु दादा, विजय श्री हर्ष गुरु पादा ।
लघु तस शिष्य सुखदाया, वल्लभ जिनराज गुण गाया ॥ ३ ॥
चतुर्दशराज जिनवर का, कहा गणधरने फरमाया ।
ऋषि मुनि तंत्र में गाया, संक्षेपे लेश बतलाया ॥ ४ ॥
रस युग वेद कर[1] थाया, संवत महावीर जिनराया ।
आतम पचवीस तेवीसा, कमी विक्रम सयवीसा ॥ ५ ॥
विजय दशमी कविवारे[2], मास आश्विन उजियारे ।
खुडाला संघ जयकारी, करी रचना आनंद भारी ॥ ६ ॥
सुधारी भूल चुक लेना, सज्जन मोहे जान कर देना ।
मिच्छामिदुक्कडं भाखे, वल्लभ प्रभुपार्श्व[3] की साखे ॥ ७ ॥

इतिन्यायाम्भोनिधि-जैनाचार्य-श्रीमद्विजयानन्दसूरि (आत्मारामजी) शिष्य-श्रीमान् श्रीलक्ष्मी-विजयजी शिष्य-श्रीमान् हर्षविजयजी शिष्य-श्रीवल्लभ विजय विरचिता चतुर्दश रज्ज्वात्मक लोकस्वरूप गर्भिता श्रीदेवाधिदेवपूजा समाप्ता ॥

---

(१) २४४६ (२) शुक्रवार (३) यह पूजा खुडाला गाम में श्री धर्मनाथ स्वामी के समीप शुरु की थी और फालना स्टेशन पर जो खुडाला से करीब एक माईल के अंतर में है। श्री पार्श्वनाथ स्वामी के समीप समाप्त हुई है इसलिए प्रारंभ में श्री धर्मनाथ स्वामी और अंत में श्री पार्श्वनाथ स्वामी का मंगलकारी नाम है।

१५. ॥ जीव के ५६३ भेद गर्भित श्री शांतिजिन स्तवन पच्चीशी.....॥

(राग : रंगाई जाने रंगमां....., तुं रंगाई.....)

(देव के १९८ भेद)

भवनपति दश भेदे जाणो, व्यंतरना वळी जाणो आठ ।
वाणव्यंतर पण आठ प्रमाणो, ज्योतिषी अधिका दो आठ ॥ १ ॥
वैमानिक प्रभु छव्वीस भाख्या, परमाधामीना पंदर ।
तिर्यंग्‌जृंभकना भेद कह्या दश, लोकांतिक नव अति सुंदर ॥ २ ॥
किल्बिषक त्रण जिन कह्या, ए भेद नव्वाणु देव तणां ।
पर्याप्ता-अपर्याप्ता एकसो-अठ्ठाणुं करतां दुगुणा ॥ ३ ॥
जैन झवेरी आनंदसागर, सूरिवर शासन सिंह समान ।
तस पद पंकज मधुकर किंकर, हंस वहे जिन वचनप्रमाण ॥ ४ ॥

(राग : अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे...)

(मनुष्य के ३०३ भेद)

हवे मनुष्यतणां भेद सांभलजो एक चित्ते ।
भेद अंतरद्वीपनां, छप्पन प्रीछो प्रीते ॥ ५ ॥
भेद कर्मभूमिना, पंदर पूरा जाणो ।
अकर्मभूमि त्रीश, विश्वावीश वखाणो ॥ ६ ॥
अंक समुदित सर्वे, एकसो एक प्रमाण ।
पर्याप्ता अपर्याप्ता, बसो बे जिनवाण ॥ ७ ॥
ए बस्सो बे भेद, गर्भज मनुजना भाख्या ।
जिनवचन सद्दहिने, समये[1] गणधर दाख्या ॥ ८ ॥
अपर्याप्त समुर्च्छिम, मनुजना एकसो एक ।
गर्भ हुआ त्रणसो त्रण, राखो प्रवचन टेक ॥ ९ ॥
श्री आगमोद्धारक, आनंदसागर सूरि ।
तस पादकमलनी सेव हृदय हंस भूरि ॥ १० ॥

---

(१) आगम में

(राग : चार दिवसना चांदरणा पर...)

(तिर्यंच के ४८ भेद)

स्थावर पंचक जिन कह्या, सूक्ष्म-बादर दश सद्दह्या ।
दिल वह्या पर्याप्ताऽपर्याप्ता वीस हुआ ए... ॥ ११ ॥
बे भेद वनस्पति बोधवे, प्रत्येक - साधारण ।
हवे जिन सिखवे, साधारण पंचक ठवे ए... ॥ १२ ॥
प्रत्येक पर्याप्ताऽपर्याप्ता, बे भेद जाणो ।
बुद्धिमत्ता-उल्लसता, उपकारी एम बुझवे ए... ॥ १३ ॥
ए बावीसमां हवे ए, द्वि त्रि चउ जाणो ।
विकलेन्द्रि पर्याप्ताऽपर्याप्ता, छ मळी अट्ठावीस कहे ए... ॥ १४ ॥
विशेष वीस तिर्यंचना, जळ स्थल खेचर ।
भूजपो रे उरपरि केम पूरे, ए हवे जिन कहे ए... ॥ १५ ॥
समुर्च्छिम गर्भज ए थतां, दश ने वीश करे ।
पर्याप्ता-अपर्याप्ता, तिर्यंच अडतालीश तणे ए...॥ १६ ॥
एकसो अट्ठाणु ए देवना, त्रणशे त्रण मनुज तणां ।
पुण्ये भण्या ए, अडतालीश साथे गण्या ए... ॥ १७ ॥
शत साडा पांच एक ओळवी , जिनवचनामृत केळवी
मेळवी, जाणुं मन पावन थयो रे... ॥ १८ ॥
पुण्ये नरभव पामीने, स्व-पर मोक्षगामीने ।
सुखधामीने, सेवता शीखसुख संपजे ए ॥ १९ ॥
ए उपकार जिनजी तणो, जिनवचने आदर घणो ।
दिलतणो... आणी हंस उल्लसे रे... ॥ २० ॥
शरणे आव्यो मन रुली, प्रभु वाणी मन झलहळी ।
बहु फळी, तार हो कहुं, विभो ! लळी लळी ए... ॥ २१ ॥

(राग : तुम दिल की धडकन में...)

(नारकी के १४ भेद)

नारक सात कहे जिनपति, ए अति विषम भेद ।
पर्याप्ता-अपर्याप्ता चौद सह, पांचशे त्रैशठ भेद ॥ २२ ॥
ओगणीश एकाणु संवत्सरे ,गोधरा शहेर आवास ।
शांतीजिन प्रासादथी, पूरण हुओ उल्लास ॥ २३ ॥
संख्या कृष्णा कार्तकी, भण्यु स्तवन अभिराम ।
भव निर्वेदी जीवने, ए उपकारनुं धाम ॥ २४ ॥
रचंता रळीयायत थयुं, मुख मन पावन अंग ।
आनंदसागर सूरि सेवतां, हंस पूरण उच्छरंग ॥ २५ ॥

(मुनि हंससागरजी महाराज कृत...)

१६. ॥ श्री जीवविचार स्तवन ॥

॥ ढाळ १ ली. ॥

(राग - मेरु ऊपरजी - स्नात्रपूजा....)

॥ ढाळ ॥

श्री सरस्वतीजी, वरसति वचन विलास रे ।
थुणशुं त्रिभुवनजी, तारण श्री जिन पास रे ॥
सुणो समरथजी, सुंदर श्री जिन देव रे ।
मुझ दीजेजी, भव भव तुम पाय सेव रे ॥ १ ॥

॥ त्रुटक ॥ (राग - हरिगीत छंद...)

तुम सेव पाखे सहिय भमियो, तुं न गमियो जिनवरुं ।
छकायमांहे जीव सहियो, छेदन भेदन आकरुं ॥
उत्कृष्ट आयु अवगाहना जे, एणे जीवे भोगवी ।
लाख चोराशी जीवायोनी, तेह पण में जोगवी ॥ २ ॥

॥ ढाल ॥ (राग - मेरु ऊपरजी - स्नात्रपूजा....)

मणि स्फटिकजी, हींगलो रयण[1] प्रवाल रे ।
पारो अबरखजी, गेरु खडि हरियाळ[2] रे ॥
उस[3] सुरमोजी, माटी पाषाण सात धात[4] रे ।
लुणादिकजी, पृथवी बहु भेद जात रे ॥ ३ ॥

॥ त्रुटक ॥ (राग - हरिगीत छंद...)

अनेक भेद वळी पाणी भणिए, कुप सरोवर धुंअरुं[5]
ओसा[6] हिम घणोदधि[7] करहा[8] कहिए, समुद्र अनेक पाणी खरुं ॥
अंगाल जाल मुम्मुर[9] विजलि, उलकापात[10] अग्निकणा ।
सिद्धांत मांहे छे विशेषे, भेद अनेक अग्नितणा ॥ ४ ॥

॥ ढाल ॥ (राग - मेरु ऊपरजी - स्नात्रपूजा....)

एक वायरोजी, हलवो हलवो वाय रे ।
गुंजारवजी, करतो दह[11] दिसे धाय रे ॥
पाडे ओकलि[12] जी, वळी वंटोलिओ एक रे।
घनु तनु वातजी, वायु भेद अनेक रे ॥ ५ ॥

॥ त्रुटक ॥ (राग - हरिगीत छंद...)

इम भेद दोय वनस्पति केरा, साधारण प्रत्येक तरु ।
कंद कोमल फुल अंकुरा, फल सेवाल सेखरु ॥
अनेक भेद साधारण सुणिए, लक्षण तस शास्त्रे सही ।
एहथी जे होय विपरीत, प्रत्येक वनस्पति कही ॥ ६ ॥

॥ ढाल ॥ (राग - मेरु ऊपरजी - स्नात्रपूजा....)

पृथ्वि पाणिजी, तेउ वाउ काय रे ।
वणसइ पांचमीजी, थावर काय कहेवाय रे ॥
विगलेंद्रीजी, नारकी तिर्यंच मानवी ।
वळी देवताजी, छठ्ठी त्रसकाय पालवी ॥ ७ ॥

---

(१) रत्न (२) हरताल (३) खारो (४) सात प्रकारनी धातु । (५) धुंवरी-धुमसनुं पाणी । (६) झाकळ (७) धनोदधि ते बाझेला-जामेला घी जेवुं कठण पाणी, जे पृथ्वी विमानो अने नारकीना आधारभूत असंख्य योजन प्रमाण जलपिंड छे ते (८) करानुं पाणी (९) तणखा-भाठानो अग्नि । (१०) आकाशथी पडता अग्निकण । (११) दश दिशाए (१२) जेना वडे धूलमां रेखा - आंकलीयो पडे ते उत्कलिक वायु...।

॥ त्रुटक ॥ (राग - हरिगीत छंद...)

पालवी पृथ्विकाय आयु वरस सहस बाविश ए ।
सात सहस वरस पाणि भणिए, अग्नि तिण दिन दिसए ।
वरस सहस त्रण वायु सुणिए, वणसइ दस सहस जाणीए ।
निरय देव विण जघन्य आयु, अंतर मुहूर्त प्रमाण ए ॥ ८ ॥

॥ ढाल ॥ (राग - मेरु ऊपरजी - स्नात्रपूजा....)

अंगुलतणोजी, भाग असंख्यातमो भणुं ।
स्वाभाविकजी, जघन्य हुए सहुने तनु ॥
चार थावरजी, गुरु लघु सम तनु जोय रे ।
वनस्पतिजी, सहस जोयण झाझी होय रे ॥ ९ ॥

॥ त्रुटक ॥ (राग - हरिगीत छंद...)

इम होय साधारण मनुष्य समूर्छिम, सुक्षम जेह निगोद ए ।
तस आयु अंतर मुहूर्त होये, चउद राज अभेद ए ॥
पांच थावर कहीए एकेंद्री, शास्त्रे भेद तस छे घणा ।
इम कहे कवियण सुणो भवियण, नाम मात्रज ए भण्या ॥१०॥

॥ दुहा ॥

भव सत्तर झाझा कर्या, सासोसास मझार ।
एकेंद्री भव भोगवी, वळतो विगल विचार ॥११॥

॥ ढाल २ जी ॥

(राग : हम मर जाऐंगे... आशिकी - २)

शंख छीप कोडा करमिया रे, मेहर थापना सार ।
जलो पूरा ने अलसियां रे, ए बेइंद्री विचार रे ॥
जीव जतन करो, जीम पामो भवपार रे; धन जिन वयणडा ॥१२॥

कानखजुरा मांकण जुआ रे, गद्दहिया घीमेल ।
कीडा गींगोडा कातरा रे, कीडी मंकोडी चूडेल रे ॥धन० १३॥
सावा जुवा धानकिडला रे, इयल अने इंद्रगोप ।
उधेहि ने वळी कुंथुआ रे, म करो तेइंद्रीनो लोप रे ॥धन० १४॥
बिंछी कंसारी खडमांकडी रे, भमरा भमरी ने तीड ।
माखी मसा डांस पतंगिया रे, टालो चोरेंद्रीनी पीड रे ॥धन० १५॥
जीवित वरस बार बेइंद्री रे, हवे तेइंद्री प्रकाश ।
दिवस ओगणपचासनुं रे, चोरेंद्री षट् मास रे ॥धन० १६॥
शंख प्रमुख जे बेइंद्री रे, तस तनु जोयण बार ।
कानखजुरो गाउ त्रसनो रे, भमरो होय गाउ च्यार रे ॥धन० १७॥
बेइंद्री तेइंद्री चोरेंद्री रे, ए विगलेंद्री नाम ।
कहे कवियण तुमे सांभळो रे, हवे पंचेंद्री अभिराम रे ॥धन० १८॥

॥ दुहा ॥

नहि विवेक विगलपणे, नहि तस तत्त्वविचार;
भव भवांतर भोगवी, उपना नरक मझार ॥ धन. १९ ॥

॥ ढाल त्रीजी ॥

(राग : गोडी)

रत्नप्रभा पहेली जेह रे, सागर एकनुं, एकत्रीश हाथ छ आंगुली ए ॥
शर्कराप्रभा बीजी होय रे, त्रण सागर तिहां,
हाथ बासठ बार आंगुली ए ॥ २० ॥
वालुकाप्रभा पुहवी त्रीजी रे, सागर सात आयु, एकत्रीश धनुष एक हाथनुं ए ॥
पंकप्रभा चोथी नाम रे, दस सागर सही,
बासठ साढी धनुष तनु ए ॥ २१ ॥
पांचमी धुमप्रभाय रे, सतर सागर सुणो, धनुष सवासो जाणीए ए ॥
तमप्रभा छट्ठी जाण रे, बावीश सागर,
धनुष अढीसें जाणीए ए ॥ २२ ॥
तमतमा सातमी नाम रे, सागर तेत्रीश, धनुष पांचसे देह रचे ए ॥
पांच कोड अडसठ लाख रे, सहस नवाणुं ए,
रोगे नारकी नित पचे ए ॥ २३ ॥
परमाधामी पचावे रे, वलि दश वेदना, कीधां करम ते भोगवे ए ॥
राज राज वधे पुहवी रे, इम सात राजनी,
सातमी पृथ्वी जोगवे ए ॥ २४ ॥

॥ दुहा ॥

सात प्रकारे नारकी, बोल्यो तास विचार;
जलचर थलचर खेचरु तिर्यंच त्रण प्रकार ॥ २५ ॥

॥ ढाळ ४ ॥

(राग : एक पंखी आवीने ऊडी गयु...)

उरपरि भुजपरि गर्भज थाय, गर्भ समूर्छिम मत्स्य कहेवाय ।
वरस पूरव कोडी आय, हो भविका ! वरस पूरव कोडी आय ॥ २६ ॥
सहस जोयण तस काया दिसे, भुजपरि कोस पृथक्त्व कहिसे ।
जिनवचने चित्त हिसे, हो भविका ! जिनवचने चित्त हिसे ॥ २७ ॥
त्रेपन सहस समूर्छिम व्याल, भुजपरि सहस वरस बायाली ।
जोयण पृथक् धनु भाल, हो भविका ! जोयण० ॥ २८ ॥
गर्भज तिर्यंच चउपदनी जात, त्रण पल्योपम आयु विख्यात ।
काया छ कोस सुण भ्रात, हो भविका ! काया० ॥ २९ ॥

चउपद समूर्छिम कहीए जास, आयु सहस चोराशी वास ।
कोस पृथक्[१] तनु तास, हो भविका ! कोस० ॥ ३० ॥
पंखी गर्भज आयुनो भाग, पल्योपम असंख्यातो भाग ।
धनुष पृथक् तनु लाग, हो भविका ! धनुष० ॥३१॥
समूर्छिम पंखी बहोंतेर सहस, ए पहिले आरे कहेस ।
चउपद विवरी लहेस, हो भविका ! चउपद० ॥३२॥
जेणे आरे जे मानव आयु धार, तेह तणा भाग किजे उदार ।
भाग चउथे अश्व सार, हो भविका ! भाग० ॥३३॥
अज आयु भाग आठमे वखाण, गाय भेंस उंट खरादिक जाण ।
पांचमे भाग प्रमाण, हो भविका ! पांचमे० ॥३४॥
श्वानादिक भाग दसमे कहिए, हस्ति आयु मानव परे लहिए,
जिनआणा शिर वहिये, हो भविका ! जिन० ॥३५॥

॥ दुहा ॥

पशुअपणे परवश पड्यो, पाम्यो दुःख अपार ।
कर्म केतां तिहां निर्जरी, धर्यो मनुज अवतार ॥३६॥

॥ ढाळ ५ मी ॥

(राग : युगो सुधी झलहलशे भुवनभानुना...)

चार कोडाकोडी सागरु रे, सुसमसुसमा नाम ।
त्रण पल्योपम आउखुं रे, त्रण गाउ अभिराम रे;
प्राणी ! मानव भव अवतार, भरीए सुकृत भंडार रे;
प्राणी ! मानव भव अवतार ॥३७॥

---

[१] बे गाउथी नव गाउ ।

सागर कोडाकोडी गणनो रे, सुसम बीजो जेह ।
आयु पल्योपम दोयनुं रे, जुगल गाउ दो देह रे ॥ प्राणी० ॥३८॥
त्रीजो सुसमदुसमा रे, सागर कोडाकोडी दोय ।
एक पल्योपम जुगलने रे, कोस काया एक होय रे ॥ प्राणी ॥३९॥
पहेले तूयर बीजे बोर समो रे, त्रीजे आमलुं धार ।
अट्ठम छट्ठ एकांतरे रे, सुरतरु पूरे आहार रे ॥ प्राणी० ॥४०॥

दुसमसुसम कोडाकोडीनो रे, सहस बेंतालीश ऊन ।
पूरव कोडी वर्ष मानवी रे, पांचशें धनुष संपूर्ण रे ॥ प्राणी० ॥४१॥

वरस सहस एकवीशनो रे, दुषमा कलियुग नाथ ।
एकसो वीश वरसनुं आउखुं रे, मानवकाया सात हाथ रे॥ प्रा० ॥४२॥

छट्ठो सहस एकवीशनो रे, दुषमदुषमा अपार ।
वीश वरस दोय हाथ तनु रे, मच्छाहारी नर नार रे ॥ प्राणी० ॥४३॥

छये आरे अवसर्पिणी रे, उत्सर्पिणी विपरीत जाण ।
कालचक्र ए दोय मीली रे, बार आरे परमाण रे ॥ प्राणी० ॥४४॥

पांच भरत पांच ऐरवते रे, तिहां सदा सरीखो काळ ।
पांच विदेहे परंपरा रे चोथो आरो विशाल रे ॥ प्राणी० ॥४५॥

॥ दुहा ॥

दश दृष्टांते दोहिलो, मानवतणो अवतार;
शुभ भावे सुकृतपणे, उपनो देव मोझार ॥४६॥

|| ढाल ६ ||

(राग : आशावरी / तेरे सुर और मेरे गीत...)

दश प्रकारे भवनपति कहीए, व्यंतर आठ प्रकार रे ।
ज्योतिषी पांच प्रकारे सुणजो, दोय वैमानिक सार रे ॥ दश ॥ ४७ ॥
असुरकुमार साधिक एक सागर, सात हाथ तस काय रे ।
देश ऊणा दोय पल्योपम, नव निकाय कहेवाय रे ॥ दश ॥ ४८ ॥
लाख सहस वर्ष एक पल्योपम, चंद्र सूरज विचार रे ।
व्यंतर आयु एक पल्योपम, तनु सम असुरकुमार रे ॥ दश ॥ ४९ ॥
नारकी भवनपति ने व्यंतर, दश सहस वरस जघन्य रे ।
ज्योतिष पल्योपम अड भागे, पल्योपम विमान रे ॥ दश ॥ ५० ॥
युगल सुधर्मा ईशानेन्द्र, इहांथी होये एक राज रे ।
सागर वे बीजे झाझेरां, सात हाथ विराज रे ॥ दश ॥ ५१ ॥
सनत्कुमार युगल माहेंद्र, दोय राज हवे जाण रे ।
त्रीजे सात चोथे सात झाझा, छ हाथ काय प्रमाण रे ॥ दश ॥ ५२ ॥
पांचमे ब्रह्म आयु दश सागर, लांतक छठ्ठे चउद रे ।
पांच हाथ तस काया कहीये, त्रण राज अभेद रे ॥ दश ॥ ५३ ॥
शुक्र सातमे सतर सागरनुं अड सहसारे अढार रे ।
चार हाथ तनु सुंदर सोहे, राज हवे इहां चार रे ॥ दश ॥ ५४ ॥
नवमे आनत ओगणीश सागर, प्राणत दशमे वीश रे ।
एकादशमे कारण एकवीश, बारमे अच्युत बावीश रे ॥ दश ॥ ५५ ॥
ए चारे त्रण हाथनी काया, पांच राज इहां सोहे रे ।
नव ग्रैवेयक एह ऊपर जोइ, दीठे मुज मन मोहे रे ॥ दश ॥ ५६ ॥

|| दुहा ||

बार स्वर्ग सोहे तदा, जिहां राजनीति प्रधान;
बीजो भेद विमाननो, नव ग्रैवेक निधान ॥ ५७ ॥

|| ढाल ७ ||

(राग : ए दिले नादान... / यह है पावन भूमि...)

सुदर्शन पहिले, सागर तिहां त्रेवीश ।
सुप्रतिबद्धे चउवीश, मनोरमे पचवीश ॥ ५८ ॥

सर्वतोभद्रे छवीश, सुविशाले सत्यावीश ।
सुमनसे अडविश, हवे त्रीजे त्रिके जगीश ॥ ५९ ॥

ओगणत्रीश सुमणसे, प्रियंकर आठमे त्रीश ।
आदित्ये एकत्रीश, दोय हाथ तनु दीश ॥ ६० ॥

हवे नवमे ग्रैवेयके, छ ए राज प्रधान ।
सातमुं सिद्ध छेहडे, हवे अनुत्तर विमान ॥ ६१ ॥

विजय विजयंत, जयंत अपराजित ।
सर्वार्थसिद्धे नहीं, तिहां राजनीति ॥ ६२ ॥

सागर आयु तेत्रीश, काया कर एक वारु ।
एका अवतारी, सुख अनंत तस चारु ॥ ६३ ॥

तिहांथी बार जोजन, सिद्धशिला महंत ।
जोजनने अंते, सिद्ध हुवा अनंत ॥ ६४ ॥

आयु अवगाहना, कही सामान्य प्रकार ।
जघन्य संक्षेपे, बोल्यो तास विचार ॥ ६५ ॥

|| दुहा ||

भवस्थिति एणी रे भोगवी, तुझ विण त्रिभुवन देव;
कुण स्थानक कायस्थिते, रह्यो कहुं सुणो हेव ॥ ६६ ॥

॥ ढाळ ८ ॥

(राग : मेंदी ते वावी मांडवे... गरबा)

सात हेठ सात ऊपरे ए, चउद राजलोक भाव, भविक जन भावि ए ।
पुरुषाकार लोक पूरीयो ए, षट् पदारथ भाव. भविक. ॥ ६७ ॥
निरय भवनपति देवता ए, अधोलोके निःशंक, भविक. ।
व्यंतर नर तिरि गिरिवरु ए, द्वीप समुद्र असंख्य. भवि. ॥ ६८ ॥
अग्नि विगलेंद्रि ज्योतिषी ए, ए सवि त्रिछे[1] लोय, भवि. ।
स्वर्ग ग्रैवेक पांच अनुत्तरु ए, सर्व सिद्ध ऊरध लोय. भवि. ॥ ६९ ॥
असंख्यात अवसर्पिणी ए, सर्व एगिंदि स्थिति काय, भवि. ।
काल अनंतो अनंतकाय में ए, उपजे ने वली जाय. भवि. ॥ ७० ॥
विगल आयु वरस सहसनी ए, नर तिरि भव सात आठ; भवि. ।
नारकी देव चवी न उपजे ए, जघन्य आयु परिपाठ भवि. ॥ ७१ ॥
सात सात लाख चार थावरु ए, वनस्पति दश लाख; भवि. ।
अनंतकाय चउद लाख सुणो ए, विगलेंद्री दोय भाख. भवि. ॥ ७२ ॥
नारकी तिर्यंच देवता ए, चउ चउ लाख होय तेह; भवि. ।
चउद लाख वळी मानवी ए, संख्या जीवायोनि एह. भवि. ॥ ७३ ॥
इंद्रि पांच त्रण बल कह्यां ए, श्वासोश्वास वली आय; भवि. ।
ए दश प्राण होए संनिया ए, नव असंनिया थाय. भवि. ॥ ७४ ॥
छ सात आठ विगल तणे ए, एकेंद्रि प्राण चार; भवि. ।
नर तिर्यंच त्रण वेद सुणो ए, देवता दोय वेद सार. भवि. ॥ ७५॥
थावर विगलेंद्रि नारकी ए, एक नपुंसक वेद; भवि. ।
पज्जे मणु अधिक बादर अग्गिए, विमाणी भुवणेंद. भवि. ॥ ७६ ॥
निरय व्यंतर ज्योति चोरेंद्रि ए, तिर्यंच बी-तिइंद्रिक; भवि. ।
पृथ्वी पाणी वाउ वणसइ ए, एक एक जीवथी अधिक, भवि ॥ ७७ ॥

---

[1] तिर्च्छा लोक में

चउ गति भमी भमी उपनो ए, संप्रति प्रभु पद लीध; भवि. ।
शास्त्र थकी जे विरुद्ध होये ए, पंडित करजो शुद्ध. भवि. ॥ ७८ ॥
हार हैये नव निधि तणो ए धरजो चतुर सुजाण; भवि. ।
भणे गुणे ने सांभळे ए, तस घर कोडि कल्याण. भवि. ॥ ७९ ॥

॥ ढाळ ९ मी ॥

(राग : धनाश्री)

चउद ए राजमां जीव कइ युग भम्यो, सूक्ष्म बादर अनंती वारो ॥
कर्मनी कोडी भर अकामनिर्जरा करी,
पामीया पास त्रिभुवन तारो. ॥८०॥
भेट्यो भेट्यो प्रभु पास चिंतामणि, एहज मुगतिनो मार्ग साचो ॥
कुगुरु कुदेव कुधर्म ते परिहरो,
मोह मिथ्यामति कांइ राचो. भेट्यो. ॥८१॥
नयर गुणदिवी (गणदेवी) गुणवेली वाधे सदा, पुष्करावर्त्त मेघ पास देवो ॥
श्री संघ मंडपे वेली ते विस्तरी,
उपजे आणंद सुकृत मेवो. भेट्यो. ॥८२॥
संवत शशि सायर चंद्र लोचन[1] स्तव्यो, आसो शुदी दशमी रविवार राजे ॥
करी शिरताज गुरुराज आणंदजी,
तस पटे सूरि विजयसेन छाजे. भेट्यो. ॥८३॥
धन्य धनहर्ष गुरु विबुध चूडामणि, जास दीक्षित जगे कीर्त्ति सारी ॥
रत्नविजय बुध सत्यविजय तणो,
बुद्धिविजय भणे आणंदकारी. भेट्यो. ॥८४॥

// इति श्री जीवविचार स्तवन //

(प.पू. बुद्धिविजयजी कृत...)

---

[1] १७१२

१७. ॥ श्री नवतत्त्वनुं स्तवन ॥

॥ दुहा ॥

श्री अरिहंतना पाययुगल, प्रणमी परमाणंद ।
नवतत्त्व विवरण कहुं, भाख्या वीर जिणंद. ॥ १ ॥
नव निधान चक्रवर्तिना, जिम धन पार न होय ।
तेम नवतत्त्व विचारनो, पार न पामे कोय. ॥ २ ॥
नव नंदे नव डुंगरी, कनक तणी जल निध ।
तेम नवतत्त्व विचारणा, राखो हइडा सनिध. ॥ ३ ॥
ग्रीवा नव ग्रैवेक छे, लोक नाल ब्रह्मांड ।
मुख मंडल कंठे धरे, तत्त्व नव निज पिंड. ॥ ४ ॥
नव वाड रक्षा करो, ब्रह्मचर्य निज ब्रह्म ।
तिम नव तत्त्वज राखजो, विनय मूल जिन धर्म. ॥ ५ ॥

(चोपाई) (राग : फूल तुम्हे भेजा है खत में...)

श्रीपास जिनेश्वर प्रणमी पाय, सद्गुरु दानतणे सुपसाय ।
नवतत्त्वनो कहुं विचार, सांभलजो चित्त दइ नर-नार ॥ १ ॥
जीव[१] अजीव[२] पुण्य[३] पापज[४] जोय, आश्रव[५] संवर[६] निर्जरा[७] होय ।
बंध[८] मोक्ष[९] नवतत्त्व ए सार, हवे कहुं एहनो विस्तार ॥ २ ॥
जीवतत्त्व चेतन लक्षण जाण, चउद भेद एहना परमाण ।
अजीव अचेतन लक्षण जोय, चउद भेद एहना पण होय ॥ ३ ॥
पुण्य कर्म शुभ कर्मनो संच, बेंतालीश भेदे तेहनो संच ।
पाप कर्म अशुभ कर्मनो उदे, बाशी भेदे जिनवर वदे ॥ ४ ॥
आश्रव कर्म आववानो ठाम, बेंतालीश भेदे ते ताम ।
संवर तत्त्व आश्रव रुंधवो, सत्तावन भेदे संस्तव्यो ॥ ५ ॥
निर्जरा तत्त्व खपावे ताम, बारे भेदे ते अभिराम ।
बंध तत्त्वना चार प्रकार, देव नर तिरी नरक विचार ॥ ६ ॥
मोक्ष तत्त्व कर्म चय करी जाय, नव भेदे तेही ज कहेवाय ।
बसे छोंतेर भेद वखाण, श्रावक ते जे एहना जाण ॥ ७ ॥

(१) ॥ जीव तत्त्व ॥

(राग : दिल दिया है जान भी देगे...)

चेतन लक्षण एक प्रकार, त्रस थावर दोय विध सार ।
त्रण विध पुरुष स्त्री नपुंसके, सुर नर तिरि नारकी चउ थानके ॥ ८ ॥
पांच प्रकारे जीव ज कहुं, एकेंद्रि बेइंद्रिय लहुं ।
तेइंद्रिय चउरेंद्रिय सार, पांचे इंद्रियना बहु प्रकार ॥ ९ ॥
षड्विध पृथ्वी तेउ अप्काय, वायु वनस्पति छट्ठी त्रसकाय ।
पांचशें त्रेसठ भेदे जीव, जिनवरजी भाखे सदीव ॥ १० ॥
बे भेदे एकेंद्रिय जोय, सूक्ष्म बादर ए बे होय ।
संज्ञी असंज्ञी पंचेंद्रिय कह्या, गुरु वचने आगमथी लह्या ॥ ११ ॥
बेइंद्रिय तेइंद्रिय सार, चउरेंद्रि ए सात प्रकार ।
ए साते पर्याप्ता कह्या, साते इम अपर्याप्ता लह्या ॥ १२ ॥
पर्याप्ता ते कहीए जेह, पर्याप्ति पूरी करे एह ।
अपर्याप्ता पूरी नवी करे, चोथी पर्याप्ति कीधा विण मरे ॥ १३ ॥
ए छे जीवना चौद प्रकार, धारे समदिट्ठि[१] नरनार
जीव जाण्या विना समकित नहि, एहवी वात जिनवरे कही ॥ १४ ॥
हवे कहुं पर्याप्तिना नाम, जेणे द्वारे आवे ज्ञान ।
संसारी जीवने पर्याप्ति कही, सिद्ध जीवने पर्याप्ति नहि ॥ १५ ॥
आहार पर्याप्ति पहेली जाण, शरीर पर्याप्ति बीजी वखाण ।
इंद्रिय पर्याप्ति त्रीजी कही, श्वासोश्वास ए चोथी लही ॥ १६ ॥
भाषा पर्याप्ति पांचमी सही, मनःपर्याप्ति छठ्ठी लही ।
एकेंद्रियने पर्याप्ति चार, आहार शरीर इंद्रिय उदार ॥ १७ ॥

---

(१) समकित दृष्टि.

श्वासोश्वास ए चारे जाण, विगलेंद्रियने पांच प्रमाण ।
पांचमी भाषा ते वधी सार, संज्ञीने मननो विस्तार ॥ १८ ॥
एकेंद्रियने चार ज प्राण, स्पर्शेन्द्रियने कायबल जाण ॥
श्वासोश्वास अने आउखो, प्राण चार एम ज ओलखो ॥ १९ ॥
प्राण षट् बेइंदियने होय, स्पर्श रस ने कायबळ होय ।
वचनबळ श्वासोश्वास आयु जाण, भाख्यो सिद्धान्ते ए ज प्रमाण ॥ २० ॥
तेइंद्रियने सात ज प्राण, स्पर्श रस घ्राणेंद्रिय जाण ।
काया वचनबळ श्वासोश्वास, सातमो आयु कह्यो विख्यात ॥ २१ ॥
प्राण आठ चौरेंद्रियने होय, स्पर्श रस घ्राणेंद्रि चक्षु जोय ।
तनुबल वाग्बल जाणो एह, श्वासोश्वास ने आयु तेह ॥ २२ ॥
पंचेंद्रियने पांचे प्राण[1], मनबल वचन कायबल जाण ।
श्वासोश्वास अने आउखो, संज्ञी असंज्ञी नव दस ओलखो ॥ २३ ॥
जीव ते जे प्राण ज धरे, प्राण विना ते निश्चे मरे ।
जे नर जीवना प्राण ज हरे, तिणे हिंसा नरके संचरे ॥ २४ ॥

(२) ॥ अजीव तत्त्व ॥

(राग : कोयल टहुंक रहि मधुबन में...)

धर्म अधर्म अने आकाश, त्रण त्रण भेद एहना परकाश ।
खंघ देश अने प्रदेश, दशमो काल कह्यो सविशेष ॥ २५ ॥
चलण सहाय धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय ते स्थिर सहाय ।
अवकाश लक्षण आकाश कह्यो, गुरूपसाय आगमथी लह्यो ॥ २६ ॥
काल ते जे समयादिक जाण, हवे कहुं तेहनुं प्रमाण ।
असंख्यात समये आवलिका जोय, कोडी एक सतसठ लख होय ॥ २७ ॥

---

(१) इन्द्रिय

सतोतेर सहसने बशें सोल जोय, एटली आवलिकाए मुहूर्त होय ।
त्रीश मुहूर्ते दिन रात्रि जाय, त्रीशे दिवसे मास ज थाय ॥ २८ ॥
बारे मासे वर्ष ज गणो, पांचे वर्षे जुग इम सुणो ।
वीश जुग ते सोनुं नाम, काल असंख्य एणी परे जाण ॥ २९ ॥
पुद्गलना तो चार प्रकार, खंध देश प्रदेश ए सार ।
चोथो भेद ते परमाणुओ, खंध देश प्रदेशथी जुओ[1] ॥ ३० ॥
ए चौद भेद अजीवना जाण, समदिट्ठि ते करे प्रमाण ।
हवे नवविध पुण्यना सार, उपार्जवानो कहुं विचार ॥ ३१ ॥

(३) ॥ पुण्य तत्त्व ॥

(राग : वीर जिणंद जगत उपकारी...)

दान मांहे उत्तम अन्नदान, बीजुं पुन्य पाणी परधान ।
थानक पुन्य ते त्रीजुं सहि, शय्या पाट ते चोथुं ग्रही ॥ ३२ ॥
वस्त्र दान दीजे शीतकाल, पुन्ये फळे मनोरथमाल ।
मनपुन्य वचपुन्य कायपुन्य जाण, नवमो नमस्कार पुन्य वखाण ॥ ३३ ॥
ए नव पुन्य उपजवानां ठाम, तेहनां कह्यां जुजवां[2] नाम ।
पुन्य भोगववाना कहुं प्रकार, बेंतालीश भेदे ते सार ॥ ३४ ॥
सातावेदनी सुख जेहथी थाय, उंचगोत्र धूर आसन लेवाय ।
मनुष्यगति मनुष्यानुपूर्वी, गते जातो नवि भूलो भमी ॥ ३५ ॥
देवगति देवानुपूर्वी जाण, पंचेंद्रियनी जाति प्रमाण ।
औदारिक शरीर मनुष्य तिर्यंच, वैक्रिय देवता नारकी संच ॥ ३६ ॥
आहारक चौदपूर्वीने होय, तेज आहार पचावे सोय ।
कार्मण ते कोदाळारूप, औदारिक अंगोपांग सुरूप ॥ ३७ ॥

---

(१) जुदो (२) जुदां जुदां ।

वैक्रिय अंगोपांगने थुणुं, आहार अंगोपांगज भणुं ।
वज्रऋषभनाराच संघयण, जिनजीनां ए साचां वयण ॥ ३८ ॥
वज्र कहेतां खीली जाण, ऋषभ तेह पाटोज वखाण ।
नाराच बेहु पासे मर्कटबंध, प्रथम संघयण एणी परे संघ ॥३९॥
वाम[1] ढींचणथी जमणो खभो, दाहिण[2] ढींचणथी डाबो खभो ।
मस्तक अंगथी पलांठी अंत,जमणा ढींचणथी डाबो ढींचण जंत ॥ ४० ॥
समचौरस कहीए संस्थान, चिहुं भागे ए सरिखो मान ।
शुभवर्ण रातो पीळादिक कह्यो, शुभ रस ते मधुरादिक लह्यो ॥ ४१ ॥
शुभगंध कपूर चंपादिक जेह, शुभ फरस[3] सुंवाळो तेह ।
अगुरुलघु भारे हळवुं सहि, पराघात ते अन्य सहे नहि ॥ ४२ ॥
श्वासोश्वास सुखे लेवाय, चोवीशमो ते ए कहेवाय ।
आतप ते सूरजनी परे, उद्योत ते अजवाळुं करे ॥ ४३ ॥
निर्माण कर्म ते सूत्रधार, अंगोपांग रूडो आकार ।
रूडी गति हंस सरीखी जाण, त्रस शक्ति चालवानी आण ॥ ४४ ॥
बादर आवे दृष्टिगोचरे, पर्याप्तो पर्याप्ति पूरी करे ।
प्रत्येक शरीरे एकज जीव जोय, स्थिर नामे अंगोपांग निश्चल होय ॥ ४५ ॥
शुभ नाम उपरे रूडो भणुं, सुभग ते लोकने सोहामणुं ।
सुस्वर बोले मीठे स्वरे, आदेय वचन जे प्रमाणज करे ॥ ४६ ॥
जशकर्म जेहनो जश बोलाय, सुर नर तिरि आयु बंधाय ।
तीर्थंकर नामकर्म जे जाण, ए भेद बेंतालीश पुण्य प्रमाण ॥ ४७ ॥

---

[1] डाबा [2] जमणा [3] शुभ स्पर्श

(४) ॥ पाप तत्त्व ॥

(दुहा)

चोथुं तत्त्व हवे सांभळो, पापतणो उदय एह ।
ब्याशी भेद जिनवरे कह्या, मतिशुं धारो तेह ॥ ४८ ॥
मति श्रुत अवधि मनःपर्यव,केवळ ज्ञान ए पंच ।
आवरण ढांकतां होय ते, पाप तणो फल संच ॥ ४९ ॥

(चोपाई)

(राग : प्रितलडी बंधाणी रे अजीत जिणंद शुं...)

दानांतराये दान न देवाय, लाभांतराये लाभ नवी थाय ।
भोगांतराय छते भोग वियोग, उपभोगांतराये नवी मले जोग ॥ ५० ॥
हवे कहुं ते वीर्य अंतराय, बळ पराक्रम नवी फोरवाय ।
चक्षुदर्शनावरणे नेत्र नवी होय,
अचक्षुदर्शनावरणे इंद्रीबल नवी जोय ॥ ५१ ॥
अवधिदर्शनावरणे अवधि नवी उपजे,
केवळदर्शनावरणे केवळ संपजे ।
सुखे जागे ते निद्रा जोय, कष्टे जागे ते निद्रानिद्रा होय ॥ ५२ ॥
बेठा निद्रा आवे जेह, प्रचला निद्रा कहीए तेह ।
वाटे चालतां उंघतो जाय, प्रचलाप्रचला ते कहेवाय ॥ ५३ ॥
निद्रामांहे करे सर्व काम, थीणद्धी[1] निद्रा तेहनुं नाम ।
नीचगोत्र ते नीची जात, अशातावेदनी पामे घात ॥ ५४ ॥
मिथ्यात्व जे माने कुदेव, कुधर्म कुगुरुनी करे सेव ।
हाल्या चाल्यानी शक्ति न होय, थावरपणुं ते कहिए सोय ॥ ५५ ॥
दृष्टि गोचरे न आवे जीव, तेह कहीए सूक्ष्म सदीव ।
पर्याप्ति पूरी नवी होय, अपर्याप्तो ते कहीए सोय ॥ ५६ ॥

---

[1] स्त्यानार्द्धि-नाम की निद्रा

एक शरीरे जीव अनंत, साधारण ते कहीए जंत ।
दांत हाड अंग हाले घणो, पाप उदय ते अथिरजपणो ॥ ५७ ॥
नाभि ऊपर पाडुओ[१] आकार, अशुभपणुं ते पाप प्रकार ।
भुंडा बोले लोक सहु कोय, दुर्भाग्यपणुं ते सहि होय ॥ ५८ ॥
स्वर बोले जे असुयातणो, पाप उदय ते दुःस्वरपणो ।
वचन न माने जेहनो कोय, अनादेय वचन प्रमाण न होय ॥ ५९ ॥
रूडुं करतां जश न बोलाय, अपजशपणुं तेही ज कहेवाय ।
नरकगति नारकी अनुपूरवी, नरक आयु ए पाप अनुभवी ॥ ६० ॥
क्रोध मान माया लोभज जाण, संज्वलनो ए पक्ष प्रमाण ।
क्रोध मान माया लोभ विचार, प्रत्याख्यानी मास ज चार ॥ ६१ ॥
क्रोध मान माया ने लोभ, वरस एक लगे एहनो थोभ ।
अप्रत्याख्यानी ए कहेवाय, पाप उदय त्यारे नवी जाय ॥ ६२ ॥
क्रोध मान माया, ने लोभ, जीवितव्य लगे एही ज थोभ ।
अनंतानुबंधी एही ज चार, पाप उदये रोळे संसार ॥ ६३ ॥
हास्य रति अरति भय शोक, छठ्ठो ते दुगंछा थोक ।
पुरुष स्त्री नपुंसक वेद, गति तिर्यंच एकसठमो भेद ॥ ६४ ॥
तिर्यंचनी अनुपूर्वि जाण, एकेंद्रिय ते पाप प्रमाण ।
बेइंद्रिय तेइंद्रिय सहि, चौरेंद्रिय ते पापप्रकृति कही ॥ ६५ ॥
कुत्सित गति रासभनी जाण, उपघात पडजीभी नाण ।
वर्ण गंध रस स्पर्श विचार, ए पामे ते अशुभ असार ॥ ६६ ॥
पाटो बेहु दिशे मर्कट बंध, ऋषभनाराच संघयण संघ ।
बिहुं दिशी मर्कट बंध खीली नहि, नाराचसंघयण ए वात ज कही ॥ ६७ ॥

---

(१) खराब

एक दिशी मर्कट बंध ज होय, अर्धनाराच संघयण ए जोय ।
कीलिका खीलीवाळुं जोय, छेवट्ठे संधि लगाडी होय ॥ ६८ ॥
नाभी ऊपर रूडो लह्यो, निगोह[१] संठाण इणी परे लह्यो ।
नाभी नीचे ते रूडो जाण, ऊंचे भुंडो ते सादि संठाण ॥ ६९ ॥
वामन संठाण एणी परे जोय, मस्तक ग्रीवा हाथ पग होय ।
कुब्ज पुंठ उदर असार, एकाशीमो पाप विचार ॥ ७० ॥
सघळां अंगोपांग कुरूप, हुंडकनुं ए कह्युं स्वरूप ।
ब्यासी भेद ते पापना जोय, समदिट्ठि ते छांडे सोय ॥ ७१ ॥

(५) ॥ आश्रव तत्त्व ॥

(दुहा)

श्री जिनवरजीए भाषिया, प्रश्नव्याकरण मोझार ।
पाप आवे जेणे थानके, तेहना पंच प्रकार ॥७२॥
भेद बेंतालीश जे कह्या, सूत्र मांहि विस्तार ।
समकितधारी ते सहि, जाणे एह विचार ॥ ७३ ॥

(चोपाई)

(राग : जिम जिम ए गिरि भेटिये रे... / तेरा-मेरा प्यार अमर...)

इंद्रिय पांच ते जिनवरे कही, पाप आवे तिणे करी सही ।
क्रोध मान माया लोभ ए चार, प्राणातिपात जीवनो संहार ॥ ७४ ॥
मृषावाद जूठो उच्चरे, अदत्तादान ते चोरी करे ।
मैथुन जे परस्त्रीनी सेव, परिग्रह ऊपर मन नित्यमेव ॥ ७५ ॥
मन वचन कायाना जोग, विपरीतपणे वर्तावे लोक ।
काया अजयणाए वावरे जेह, कायिक क्रिया कहीए तेह ॥ ७६ ॥
हळ उखल[२] घरटी कोदाल, अधिकरण क्रिया एही ज चाल ।
जीव अजीव ऊपर करे रीस, पाओसिया[३] क्रिया ते निशदिस ॥ ७७ ॥

---

(१) न्यग्रोध संस्थान. (२) खारणी, खारणीयो (३) प्राद्वेषिकी

परितापनी क्रिया ते धरे, पर आपणने[१] पीडा करे ।
प्राणातिपातिकी जीवनो नाश, आरंभीया करसण प्रकाश ॥ ७८ ॥
अनेक पदार्थ पर ममता सही, परिग्रहीया क्रिया ते कही ।
मायावत्तिया क्रिया जाण, परनी वंचना करे अजाण ॥ ७९ ॥
मिथ्यादर्शनवत्तिया हेव, कुगुरु कुदेवनी करे सेव ।
अपच्चखाण पच्चखाण नवी धरे, स्त्रीप्रशंसा दृष्टिकी करे ॥ ८० ॥
पृष्टकी क्रिया इम उचरे, भलो भुंडो देखी राग द्वेषज करे ।
पाडुचिया क्रिया ते कहेवाय, कीणहीकनी वस्तु देखी न जाय ॥ ८१ ॥
सामंतोवणीया क्रिया पातकी, ठाम उघाडां राख्या थकी ।
नेसथीआ अन्य पासे शस्त्र घडाय,साहथ्थिया पोते शस्त्र कराय ॥ ८२ ॥
जीव अजीव विणसे अणाय, आणवाणिया क्रिया कहेवाय ।
वियारणीया क्रिया ते जाण, जीव अजीव विदारे आण ॥ ८३ ॥
जमतां भाणामां माखी मरे, अणाभोग क्रिया ते धरे ।
जीण कीधे लोकमां भुंडो थाय, अणवकंख क्रिया कहेवाय ॥ ८४ ॥
अन्य पासे जे पाप कराय, अणापयोग क्रिया लगाय ।
घणा जणनो मन एकी ज थाय, सामुदायिकी क्रिया कहेवाय ॥ ८५ ॥
मित्रादि अर्थे जे करे कर्म, पिज्जत्तिया[२] एहनो मर्म ।
अणबोले क्रिया बंधाय, दोषवत्तिया[३] ते कहेवाय ॥ ८६ ॥
इर्यापथिकी क्रिया विचरंता जोय, पचविशमी क्रिया लागे सोय ।
भेद बेंतालीश आश्रवना कह्या, गुरु वचने आगमथी लह्या ॥ ८७ ॥

---

(१)पारका आत्माने (२)प्रेम प्रत्ययिकी (३)द्वेष प्रत्ययकी

(६) ॥ संवर तत्त्व ॥

(दुहा)

भेद वीश संवरना कह्या, ठाणांग सूत्र मोझार ।
भेद सत्तावन पण कह्या, ग्रंथांतरथी विचार ॥ ८८ ॥
भेद सत्तावन हवे कहुं, संवरना जग सार ।
मन शुद्धे पाळे प्रेमशुं, ते उतरे भव पार ॥ ८९ ॥

(राग : मनमोहन सुंदर मेला... / जहा डाल-डाल पर सोने की...)

धुंसर प्रमाण जुए जेह, ईर्यासमिति कहीए तेह ।
सावद्य टाली निरवद्य उचरे, भाषासमिति इणी परे धरे ॥ ९० ॥
दोषरहित जे लीये आहार, एषणासमिति कहीए सार ।
लेतां मूकतां जयणा करे, आदान निखेवणा चित्तज धरे ॥ ९१ ॥
जीव जतन करी परठवे, पारिठावणिया समिति इम स्तवे ।
मन साथे नवि करे पाप, मनगुप्ति ते इणीपरे थाप ॥ ९२ ॥
सावद्य वचन ते बोले नहि, वचन गुप्ति ते कहीए सही ।
संवरी राखे आपणी काय, काय गुप्ति ते कहेवाय ॥ ९३ ॥
प्रारंभ न करे भूख्यो रहे, क्षुधा परिसह इणी परे सहे ।
काचुं पाणी न पीए लगार, तृषा खमे तृषा परिसह सार ॥ ९४ ॥
शीत परिसह शीत ज खमे, अग्नि न वांछे काया दमे ।
उष्ण परिसह लागे ताप, स्नान न वांछे कहिए आप ॥ ९५ ॥
डांस मांख परिसह सही, डांस मांख उडाडे नहि ।
वस्त्र छते वस्त्र वांछे नहि, अचेल परिसह कहीए सही ॥ ९६ ॥
अरति परिसह मन उद्वेग, स्त्री देखी आणे संवेग ।
चर्या परिसह विहार ज करे, संकट सहे मन धीरज धरे ॥ ९७ ॥

सज्झाय भोमी डोले नहि, निसिहिया परिसह एहज सही ।
रुडो भूंडो स्थानक नवी कहे, शय्या परिसह निशदिन सहे ॥ ९८ ॥
कडवां वचन अहियासे[1] जेह, आक्रोश परिसह कहीए तेह ।
मारतां क्षमा सर्वदा करे, क्रोध परिसह इणी परे सहे ॥ ९९ ॥
भिक्षा मागतां न करे अभिमान,याचना परिसह इणविध जाण ।
अणलाधे दीन ज नवी थाय, अलाभ परिसह ते कहेवाय ॥ १०० ॥
रोग आव्ये औषध नवी करे, रोग परिसह एणी परे धरे ।
डाभ तृणनो फरसज रहे, तृणफास परिसह इणविध कहे ॥ १०१ ॥
शरीरनो मल उतारे नहि, मल परिसह ए कहीए सही ।
आदर देखी न करे अभिमान, सत्कार परिसह एही ज जाण ॥ १०२ ॥
भणया गणयानो गर्व नवी करे, प्रज्ञा परिसह एणी परे धरे ।
भणतां न आवडे तव दीन न थाय,अन्नाण[2] परिसह ए कहेवाय ॥ १०३ ॥
समकितथी नवी डोले जेह, समकित परिसह कहीए तेह ।
ए बावीशे परिसह कह्या, गुरु वचने आगमथी लह्या ॥ १०४ ॥
खांति क्षमा जे क्रोध नवी करे, मार्दवपणुं ते अभिमान न धरे ।
आर्जवपणुं कपट नवी करे, सरलपणाने चित्त ज धरे ॥ १०५ ॥
मुक्ति ते लोभनो परिहार, तप ते दुभेदे कह्यो सार ।
संयम सत्तर भेदे जाण, सत्य साचुं बोले ते जाण ॥ १०६ ॥
जीण क्रियाए कर्म लागे नहि, शौचपणुं ते कहीए सहि ।
अकिंचनपणे धन न रखाय,नव वाड सहित ब्रह्मचर्य कहेवाय ॥ १०७ ॥
दशविध यतिधर्म कह्यो सार, चालीशमो ए संवर द्वार ।
प्रथम अनित्य भावना कही, बीजी अशरण भावना लही ॥ १०८ ॥
संसार भावना त्रीजी जाण, चोथी एकत्व भावना प्रमाण ।
पांचमी अन्यत्व भावना सुणो, अशुचि भावना छठ्ठी मुणो[3] ॥ १०९ ॥

---

(१) सहे (२) अज्ञान परिषह (३) जाणो ।

आश्रव भावना कही सातमी, संवर भावना लहीए आठमी ।
नवमी निर्जरा भावना मान, दशमी लोक भावना जाण ॥ ११० ॥
बोधि भावना अग्यारमी कहुं, धर्म भावना बारमी लहुं ।
सामायिक चारित्र पहेलो कह्यो, छेदोपस्थापनीय बीजो लह्यो ॥ १११ ॥
परिहार विशुद्धि त्रीजो जाण, सूक्ष्मसंपराय चोथो वखाण ।
यथाख्यात चारित्र पांचमो कह्यो, संवर भेद सत्तावन लह्यो ॥ ११२ ॥

(७) ॥ निर्जरा तत्त्व ॥

(राग : जीना यहाँ मरना यहाँ...)

सत्तावन भेदे संवर द्वार, श्रावक ते धारे निरधार ।
छ भेदे तप बाह्य ज कह्यो, छ भेदे अभ्यंतर तप लह्यो ॥ ११३ ॥
बार भेदे निर्जरा सार, पाळे ते उतरे भवपार ।
अणसण छठ्ठ अठ्ठमादि करे, ऊणोदरी पेट पूरो नवी भरे ॥ ११४ ॥
वृत्तिसंक्षेप कह्यो ए सार, सचित्त द्रव्यनो करे परिहार ।
रस त्याग जे आयंबील करे, कायक्लेश आतापना धरे ॥ ११५ ॥
अंगोपांग संवरीने रह्या, सल्लिण[1] तप ते इणी परे कह्या ।
दूषण लाग्ये प्रायश्चित करे, ज्ञान गुरुनो विनय जे करे ॥ ११६ ॥
गुरुने आणी आपे आहार, वेयावच्च तप कहीये सार ।
मन वचन काय राखी ठाय, पंच प्रकारे करे सज्झाय[2] ॥ ११७ ।
शुक्लध्यान धर्मध्यान ज धरे, कर्म खपाववा काउसग्ग करे ।
बार प्रकारे निर्जरा कही, पांचमे अंगे गुरुमुखथी लही ॥ ११८ ॥

* * *

---

(१) संलीनता (२) स्वाध्याय

(८) ॥ बंध तत्त्व ॥

(राग : आज मारा प्रभुजी सामु जुओने...)

प्रकृति बंधनो एहिज पर्याय, रुडो पाडुओ[1] होय स्वभाव ।
स्थिति बांधी होय कर्मनी जेटली, सही भोगवे ते तेटली ॥ ११९ ॥
अनुभाग रूप रस केळवे, प्रदेश कर्मनां दळ मेळवे ।
ए बंधना चार प्रकार, टाळे ते पामे भवपार ॥ १२० ॥
अथवा बंध तत्त्व संभार, सूक्ष्म छे पण तेहनो सार ।
कहेशुं करवा पर उपगार, बंधतत्त्वना चार प्रकार ॥ १२१ ॥
एणी परे मेलो जीव कर्म बंध,जीम एकठा कर्म फूल ने गंध ।
तिल ने तेल जेम छे एकठां, दूध पाणी जेम मल्या सामटा ॥ १२२ ॥
तिणे परे जीव मिश्र छे कर्म, लोक दैव कहे छे ते कर्म ।
कर्मे भेद्यो सुख दुःख सहे, वैर भाव पण एकठा रहे ॥ १२३ ॥
कांइएक[2] थाये कर्म बलवंत, कांइएक जीव करे तस अंत ।
जीव कर्मनो एहवो ढाळ, एक एकने खाळे[3] तत्काल ॥ १२४ ॥
कर्मबंधना चार प्रकार, प्रकृति स्थिति रस प्रदेश अपार ।
प्रकृति कहीए वस्तु स्वभाव, स्थिति रहेवुं आउखानो भाव ॥ १२५ ॥
कडवो मीठो रस अनुभाग, प्रदेश भेदे दल संचे लाग ।
मोदकने दृष्टांते बंध, अथवा वैद्य गुटिका संबंध ॥ १२६ ॥
कोइक वैद्ये वाटी औषधि, बांधी गुटिका नव नव विधि ।
तेह तणो बंध ए चीहुं भेद, पहेलां प्रकृति कहुं ते छेद ॥ १२७ ॥
कोइक गोली तो हरे ताव, कोइक करे सबलाइ भाव ॥
एक श्लेष्मनो हरती ताप, एक कोढनुं टाळे पाप ॥ १२८ ॥
एक गोळी टाळे कास ने श्वास, एक हरस जलोदरनो वास ।
एक गोळीथी संन्निपात ज जाय, एक निवारे पित्त ने वाय ॥ १२९ ॥

---

(१) खराब (२) कोई वखत (३) रोके

प्रकृति स्वभावे इम गुण करे, बीजी स्थिति आयु इम धरे ।
दिन पक्ष मास छ मास ते रहे, पछे विणसे गुण नवी लहे ॥ १३० ॥
त्रीजो रस गोळीनो जेह, खाटी खारी मधुरी तेह ।
प्रदेश चोथो तोल प्रमाण, एम कहीए गोळीनो मान ॥ १३१ ॥
इणे दृष्टांते जीवनो धर्म, पुद्गल लेइ बांधे कर्म ।
ज्ञान दर्शन चारित्र आवरे, वारे दुःख सुख अनुसरे ॥ १३२ ॥
प्राये ते प्रकृति बंध ज कह्यो,प्रकृति स्वकर्म स्वभाव संग्रह्यो ।
बीजी स्थिति रहेवानुं आय, नाण दर्शनावरणी वेदनी अंतराय ॥ १३३ ॥
तिस कोडाकोडी सागर विशाल, तेत्रीश सागर आयुनो काळ ।
वीश कोडाकोडी नाम गोत्रनुं आय,सित्तेर कोडाकोडी मोहनी कहेवाय ॥ १३४ ॥
जघन्य वेदनी मुहूर्त्त बार, नाम गोत्रने आठ विचार ।
स्थिति थोडी बीजा कर्मतणी, अंतरमुहूर्त्त प्रमाण लघु गणी ॥ १३५ ॥
त्रीजुं अशुभ कर्म रस लिंब, शुभ कर्म रस साकर टींब ।
कर्मतणो दळ चोथो प्रदेश, एकठा रहे हळवा लवलेश ॥ १३६ ॥
सोवन आखळि[1] सम शुभ कर्म, लोह समान[2] लहीए अशुभ कर्म ।
बंधतत्त्व ए चार प्रकार, मत बांधो कोइ नर नार ॥ १३७ ॥

(९) ॥ मोक्ष तत्त्व ॥

(राग : तेरा मेरा प्यार अमर...)

मोक्षतत्त्व नवमो ए द्वार, तेह तणो हवे कहुं अधिकार ।
सकल कर्म तणो क्षय करी, जीव रहे तीहां सुख अनुसरी ॥ १३८ ॥
लोकाग्र भागे ते रहे, नास्तिक होय ते नवी सद्दहे ।
तेहने मोक्ष थापवा भणी, पहेलो भेद कह्यो त्रिभुवन धणी ॥ १३९ ॥
मोक्ष पदारथनो एह मतो, एक पद नाम माटे छे छतो ।
जे जे एक पद ते छे सहि, जेम जग जीवनी दया कही ॥ १४० ॥

---

(१) सोनानी बेडी (२) लोढानी बेडी

बे पद नाम पदारथ जेह, केटला सत्य असत्य होय तेह ।
श्रीनंदन जीम हस्तीदंत, राजपुत्र ने लक्ष्मीकंत ॥१४१॥
वृक्षकुसुम अने मृगशिंग, ए बेहु शब्द छता सरगंग ।
बे शब्द नाम अछता जेह, शशसिंग वंध्यापुत्र ज तेह ॥१४२॥
तुरंगम सिंग[1] ने रासभ सिंग, पाडो गाभणो करहा सिंग[2] ।
आकाश-कुसुम संजोगी नाम, एहनो किहांय न दीसे ठाम ॥१४३॥
तेम एक पद नाम मोक्ष निःसंदेह, छे निश्चे म धरीश संदेह ।
वळी मार्गणा द्वारे करी, मोक्ष प्ररूपण करुं ते खरी ॥१४४॥
बीजो भेद मोक्षनो जेह, कोण कोण जीव लहे पण तेह ।
मानवपणे पामे मुगति, त्रिहुंगतिनाने नहि मुगति ॥१४५॥
पंचेन्द्रिय कोइक सिद्ध थाय, बी ती चौरेंद्रिय नवी कहाय ।
त्रसकायथी शिवपुर होय, पांच काय पण न लहे सोय ॥१४६॥
भव्य जीव ते पामे एह, अभव्य जीव पामे नव तेह ।
लहे सन्निया[3] मोक्ष ज द्वार, असन्निया न लहे निरधार ॥१४७॥
पांचमे चारित्र लहे शिवसुख, पहिले चिहुं नवी पामे सुख ।
समकितना भेद छे जे पंच, पहिला चिहुंने नहीं शिव संच ॥१४८॥
क्षायिक समकित जीव जे लहे, मोक्ष पामे ते जिनवर कहे ।
अणहारी मुक्ति जइ मळे, आहारी ते संसारमां रुले ॥१४९॥
केवळदर्शन शिवसुख सहि, चक्षु अचक्षु अवधि त्रिहुं नहि ।
केवळज्ञान मोक्ष सर्वदा, बीजे चीहुं ज्ञाने नहि कदा ॥१५०॥
एणे दश स्थानके पामे मुक्ति, प्रथम द्वार जाणे ए सुमति ।
छतो ग्रहितो मोक्ष ज सहि, आकाशकुसुम परे ते नहि ॥१५१॥
बीजे भेदे द्रव्य प्रमाण, मोक्ष विषे सिद्ध केटला जाण ।
जीवद्रव्य सिद्धना अनंत, एहवी वात कही भगवंत ॥१५२॥
सिद्धक्षेत्र ते केटलो होय, सिद्ध रह्या अवगाही जोय ।
असंख्यातमे भागे लोकने जाण, सिद्ध रह्या एक अनंता मान ॥१५३॥
स्पर्शनाद्वार ए चोथो कह्यो, सिद्ध केटलो क्षेत्र फरसी रह्यो ।
क्षेत्र थकी मानो निरधार, झाझेरी ते फरसना सार ॥१५४॥
सिद्धने हुवो केटलो काल, ते भाष्यो छे दीनदयाल ।
एक सिद्ध आश्री सादि अनंत, सिद्ध सर्व आश्री अनादि अनंत ॥१५५॥
छठ्ठो कह्यो अंतरद्वार, सिद्ध सिद्धमां अंतर सार ।
सिद्ध सिद्धमां अंतर नहि, सिद्ध रह्या छे मांहोमहि ॥१५६॥
भाग द्वार सातमो वखाण, केटलामे भागे सिद्ध रह्या जाण ।
संसारी ते सघळा जीव, अनंतमे भागे सदैव ॥१५७॥
आठमा द्वार तणो प्रस्ताव, सिद्ध रह्या छे केहवे भाव ।
ज्ञान दर्शन छे क्षायिक भाव, जीवतणो पारिणामिक भाव ॥१५८॥
जीव फीटी अजीव न थाय, अजीव फीटीने जीव न कहाय ।
भव्य टळीने अभव्य न होय, अभव्यपणुं टळी भव्य न जोय. ॥१५९॥
पारिणामिक भाव ए जाणवो, जाणीने समकित आणवो ।
समकिती पामे सुख अनंत, एणी परे भाख्युं श्रीभगवंत ॥१६०॥
अल्पबहुत्व ते सिद्ध ज तणा, किया थोडा ने किया घणा ।
नपुंसकसिद्ध ते थोडा जाण,असंख्यात गुण स्त्रीसिद्ध वखाण ॥१६१॥
स्त्रीसिद्धथी पुरुष ज कह्या, असंख्यात गुण अधिका लह्या ।
एक समय सिद्ध केटला थाय, ते पण वात कही जिनराय ॥१६२॥
दश नपुंसक सिद्ध ज जाण, वीश होय स्त्री सिद्ध प्रमाण ।
एकसो आठ पुरुष ज कह्या, जिनवर वचने आगमथी लह्या ॥१६३॥
बसें छहोतेर बोलनो सार, आगमथी कीधो विस्तार ।
नवतत्त्वनी चोपाइ एह, भणे गणे सुख पामे तेह ॥१६४॥

---

(१) अश्वशृंग (२) ऊंट के शिंगडे (३) संजी

श्रीतपागच्छ तणा शणगार, श्रीविजयप्रभसूरि गणधार ।
तास पाटे विराजे सार, श्री उदयविजय उपाध्याय हितकार ॥१६५॥
तास शासनमांहे शोभता, श्री मणिविजय पंडित छता ।
तास शिष्य भाग्यविजयजीए कह्या, एह बोल सिद्धांत थकी संग्रह्या ॥१६६॥
संवत सत्तर छासठे उल्लास, नगर पाटण रह्या चोमास ।
भाग्यविजयजीए विनति करी, संघ समक्ष सौ चित्तमां धरी ॥१६७॥

॥ इति श्री नवतत्त्व स्तवन ॥

(मुनि भाग्यविजयजी कृत....)

श्री वीरजिनस्तुतिगर्भित

१८. ॥ चोवीश दंडकनुं स्तवन ॥ (प्रथम)

(दुहा)

प्रणमी सरस्वती भगवती, तीम जिनवर चोवीश ।
गौतम प्रमुख सूरि तथा, गुरु उत्तम सुजगीश ॥१॥
चोवीश दंडकने विषे, द्वार अछे गुणतिश[१] ।
विवरी कहीशुं तेहने, जिम भाख्या जगदीश ॥२॥
नाम[१] लेश्या[२] त्रीजुं तनु[३], अवगाहना[४] संघेण[५] ।
संज्ञा[६], आकृति[७] सातमुं, संपराय[८] सुणो सेण ॥३॥
इंद्रि[९] समुद्घात[१०] दृष्टि[११] दर्शन[१२], नाण[१३] जोगोप[१४] योग[१५] ।
उपपात[१६] ने च्यवन[१७] स्थिति[१८], पज्जत्ति[१९] आहारनो[२०] भोग ॥४॥
गति[२१] आगति वेद[२२] भवननो[२३], चोविशमो प्राण[२४] द्वार ।
संपदा[२५] धर्म[२६] जीवायोनि[२७], कुल[२८] अल्पबहुत्व[२९] विचार ॥५॥

(द्वार-१)

घम्मा वंशा सेला अंजना, रिष्टा नाम ।
मघा माघवती सातमी, ए साते दुःख खाण ॥६॥

---

(१) ओगणत्रीस

असुर नाग सुपर्ण, विद्युत ने अग्निकुमार ।
द्वीप उदधि दिशा वायु, स्तनित ए दश श्रीकार ॥७॥
सात नरकनुं एक छे, एकादश दंडक एम ।
थावर पांच तथा त्रण, विगलेंद्रिय गणिए तेम ॥८॥
पंचेन्द्रि तिर्यंच मनुज ने, व्यंतर ने जोतिष ।
वैमानिक चोवीश ए, नाम द्वार सुण शिष्य ॥९॥

(द्वार - २)[१]

नरक तेउ वाउ विगलेंद्रिय, अपज्ज लेश्या तीन ।
पंचेन्द्रिय तिर्यच मनुषने, षट् लेश्या होय पीन ॥१०॥
भवनपति दश व्यंतर, पृथ्वी अप् वण काय ।
ए चउद दंडक मांहि, आगली चार कहाय ॥११॥
ज्योतिषि सोहम ईशान, एक तेजो होय ।
पंचम देवलोक लगे पद्म, ऊपरे शुक्ल जोय ॥१२॥

(द्वार - ३)[२]

नारकी देवता सर्वने, वैक्रिय तेजस कर्म ।
वायु तिर्यंच पंचेन्द्रिय, आहारक विनु ए मर्म ॥१३॥
वायु विना चउ थावर, विगलने त्रण शरीर ।
औदारिक तेजस् कर्म, मनुजने पण[३] कहे वीर ॥१४॥

॥ ढाळ १. ॥

(राग : मारु)

(द्वार-४)

नरक गते शत पंच धनुष् अवगाहना रे ।
समुच्चे उत्कृष्ट, भाखी रे (२) साखि[४] पन्नवणा अछे रे ॥१॥

---

(१) लेश्या छ होय छे-कृष्ण, नील, कापोत, तेजो, पद्म, शुक्ल । (२) शरीर पांच होय छे-औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण (३) पांच (४) साक्षी ।

पुणा आठ धनुष् षट् अंगुल देहडी रे ।
धम्मा में उत्कृष्ट, त्रण्य रे (२) हाथ जघन्य शरीर छे रे ॥ २ ॥
साडापंदर धनुष् ने बार अंगुल लहो रे ।
त्रीजे सवा एकत्रीश, पंके रे (२) साडी बासठ धनुष्नी रे ॥ ३ ॥
सवासो धनुष्नी धूमप्रभे लहो रे ।
मघामां अढीशत[1], धनुष्य (२) शत पंच गुरु सातमी रे ॥ ४ ॥
ए उत्कृष्ट कही म्हें साते नरकनी रे ।
पुरवनी उत्कृष्ट, उत्तरे (२) उत्तरनी ते जघन्यथी रे ॥ ५ ॥
भुवनपति वण ज्योतिषीने सात हाथनी रे
तिम सोहम ईशान, त्रीजे रे (२) त्रीजे चोथे षट् तणी रे ॥ ६ ॥
पांचमे छठे पांच, चार सातमे आठमे रे ।
चार लगे तिन हाथ, हाथ रे (२) नाथ भाखे त्रण लोकनो रे ॥ ७ ॥
नव ग्रैवेयक बे कर[2], अनुत्तरे एक छे रे ।
भूजल अग्नि ने वाय, तेहनी रे (२) अंगुल असंख्यम भाग छे रे ॥ ८ ॥
लाख जोजननी, उत्तरवैक्रिय देवता रे ।
वनस्पति प्रत्येक, झाझी रे (२) जोयण सहस उत्कृष्टथी रे ॥ ९ ॥
अंगुल असंख्यमे भाग जघन्यथी जाणिये रे ।
बेइंद्रिय जोजन बार, कोश रे (२) त्रण चउ-ति-चौरिंद्रिये रे ॥ १० ॥
तिन कोश मनुजनी सहस जोयण तणी रे ।
तिरि पंचेंद्रिय देह, वैक्रिय रे (२) लाख जोयण नव शत तथा रे ॥ ११ ॥

(द्वार-५)

षट् संघयण मनुज तिरि पंचेंद्रिय लह्या रे ।
विगलेंद्रिय छेवट्ठ, जाणो रे (२) शेष असंघयणि अछे रे ॥ १२ ॥

---

(१) अढीसो धनुष्य । (२) बे हाथ ।

(द्वार-६) आहारादिक[1] चउवीशे दंडके लहो रे ।
(द्वार-७) देवने समचउरंस, आगे रे (२) षट्नर-तिरि पंचेंद्रिने रे ॥१३॥
नारक थावर विगल समुर्छिम मनुष्यने रे ।
एक हुंडक संठाण होय रे (२)
(द्वार-८) चार कषाय सवि दंडके रे ॥१४॥

॥ ढाळ २ जी. ॥

(राग :- आंखडी मारी प्रभु हरखाय छे...)

(द्वार-९) देव नरक नर तिरिपंचेंद्रिय पण इंद्रि,
थावर बि चउरिन्द्रि इग बि ति चउ वदि;
(द्वार१०)[2] नारक वायुने चार समुद्घात आगला,
देव तिर्यंच पंचेंद्रियने पण[3] आदिला ॥१॥
थावर चउ विगलेंद्रियने पहेला तिन कह्या,
मनुजने सात समुद्घात पन्नवणाए लह्या;
(द्वार११)[4] नारक नर देव तिरि पंचेंद्रि तीदृष्टि छे,
थावर पंचने एक मिथ्यात्व ते इष्ट छे ॥२॥
विगलेंद्रियने समकित मिथ्या ए दोय छे,
एणी पेरे द्वार एकादशमुं दृष्टि होय छे;
(द्वार१२)[5] देव नरक तिरि पंचेंद्रिने केवल विना,
चउरिंद्रिने चक्षु अचक्षु बे दर्शना ॥३॥
एक अचक्षु थावर बि ति इंद्रिय तणे,
चक्षु अचक्षु ओहि केवल चउ मनुजने;

---

(१) चार संज्ञा (२) समुद्घात सात होय छे (३) पांच (४) दृष्टि त्रण होय छे-समकित, मिश्र, मिथ्यात्व (५) दर्शन चार होय छे ।

(द्वार - १३)[1]

त्रण ज्ञान अज्ञान नरक देव तिर्यचने, थावरने मति श्रुत अज्ञान ए बिहुं भणे ॥४॥
विगलेंद्रियने ज्ञान अज्ञान दुधा[2] भणुं, मनुजने ज्ञान पंच अज्ञान ते त्रण गणुं;

(द्वार - १४)[3]

औदारिक आहारक दुग विणु सुणो, योग अग्यार नारक देव दंडके भवि मुणो[4] ॥५॥
औदारिक दुग कर्म भू जल वह्नि वण प्रते, वैक्रिय दुग युत पंच योग वायु मते;
औदारिक दुग कर्म चोथो वाग् योग ए, विगलेंद्रियने चार योगनो भोग ए ॥६॥
तिरिपंचेंद्रिने आहार[5] दुग विण जाणीए, पंदर योग मनुष्यने भवि मन आणीए;

(द्वार - १५)[6]

त्रण ज्ञान अज्ञान दर्शन देव नरक तिरि, ज्ञान अज्ञान दो एक अचक्षु वे तिरिंदरि[7] ॥७॥
ज्ञान अज्ञान दर्शन दोय ए छ चउरिंद्रिने; मइसु[8] अज्ञान अचक्षु थावर एकेंद्रिने;
बार उपयोग मनुष्यने लहीए इम सुणो, नाण अन्नाण दर्शन पण तिचउ क्रम थुणो ॥८॥

(द्वार १६-१७)

नारक देव तिर्यंच पंचेंद्रि विगल तथा, उपपात चवन कहुं भवि भगवती कहे यथा;
एक बे त्रण जघन्यथी, संख्य असंख्याता, उत्कृष्टा उपपात वचन समे विख्याता ॥९॥
एक समे असंख्याता थावर प्राणिया, उपजे चवे अनंता साधारण जाणिया;
एक आदि देइ जाव संख्य मनुष्य लहो, समूर्छिम नरमांहि असंख्याता सद्दहो ॥१०॥

॥ ढाळ-३जी ॥

(राग : सोने जैसा रंग है तेरा...)

(द्वार - १८)

रत्नप्रभाए जघन्यथी, दस सहस वरसनो आयो रे;
सागर एक उत्कृष्टो लहो, बीजे त्रण सागर थायो रे.
जिनवर भाखे इम वयणडां ॥ १ ॥

---

(१) ज्ञान पांच अने अज्ञान त्रण होय छे (२) द्विधा बंने, बे - बे (३) योग पंदर होय छे (४) जाणो (५) आहारक शरीरना बे योग सिवाय तेर योग होय छे (६) उपयोग बार छे (७) तेइंद्रिय (८) मति-श्रुत ।

वालुप्रभा नरके सातनुं, पंके दश सत्तर ते धूमे रे;
उदधि[1] बावीश तम नरकमां, सागर तेत्रीश तमतमे रे. जिन० ॥ २ ॥
आदि उत्कृष्टी जे कही, उत्तरनी तेह जघन्य रे;
तेर प्रतर पहेली नरकमां, तस उत्कृष्ट सुणो देइ कर्ण रे. जिन० ॥ ३ ॥
नेउं सहस तथा नेउं लक्ष छे, पुरव कोडि त्रीजे जाणो रे;
एक सागरना दश भागमां, एक भाग चोथे मन आणो रे. जि० ॥ ४ ॥
एम भाग एकेक वधारतां, तेरमे थाय दश भाग रे;
सागर एक पुरुं थइ रहे, हवे जघन्यनी सुणो वाग रे. जि० ॥ ५ ॥
दश सहस तथा दश लक्ष छे, नेवुं लाख ने पूरव कोडी रे;
हवे आगलीनुं उत्कृष्ट जे, उत्तर जघन्ये जोडी रे. जि० ॥ ६ ॥
एकादश नव शत पण तथा, त्रण एक अनुक्रम धारो रे;
हवे प्रतरे गणवानो कहुं, आम्नाय ते एक उदारो रे. जि० ॥ ७ ॥
जे नरकनी स्थिति उत्कृष्ट छे, तस कीजे जघन्य ते बादी रे;
प्रतर जेटला ते नरकना, कीजे भाग प्रतरे साधी रे. जि० ॥ ८ ॥
दश सहस वरस ते जघन्यथी, आयु भवनपति तणुं होय रे;
उत्कृष्ट चमरनुं सागरतणुं बलि इंद्रनुं अधिकुं जोय रे. जि० ॥ ९ ॥
साडा त्रण तथा साडा चार छे, तस देवी तणुं अनुक्रमे रे;
हवे नव निकाय दक्षिणतणुं, आउखुं दोढ पल्योपम रे. जि० ॥ १० ॥
पल्य दोय देशोन उत्तर तणुं, तस देवीनुं अद्ध एको रे;
देशे ऊण पल्योपम कह्युं, क्रमे गणीए धरी विवेको रे. जि० ॥ ११ ॥
सन्ना शुद्धा त्रीजी वालुका, चोथी मणशिला नाम रे;
शर्करा खर पुढवी जाणीए, अनुक्रमे सुणो आयु ठाम रे. जि० ॥ १२ ॥

---

(१) सागरोपम ।

एक बार चउद सोळ तेम वली, अष्टादश ने बावीशो रे;
सहस शब्द ते तीहां जोडीए, आउखुं भाखे जगदीशो रे जि० ॥ १३ ॥
सात सहस वरस अप्कायनुं, वासर त्रण अग्निनुं आयु रे,
त्रण सहस वरस वायुकायनुं, दश सहस वरस वणकाय रे. जि० ॥ १४ ॥
बेइंद्रिनुं बार वरस तणुं, तेइंद्रिनुं ओगणपचास दिन रे;
षट् मासनुं चौरेंद्री तणुं, जघन्य मुहूर्त होय भिन्न रे. जि० ॥ १५ ॥
जलचर गर्भज संमूर्छिम तथा, गर्भज उर-भुजपरिसर्प रे;
पूरव कोडी वरसनुं आउखुं, भिन्न मुहूर्त्त सर्पनुं अल्प रे. जि० ॥ १६ ॥
थलचर गर्भज त्रण पल्यनुं, संमूर्छिम वर्ष सहस चोरासी रे;
भाग पल्योपम असंख्यातमो, गर्भज खेचरनुं खासी रे. जि० ॥ १७ ॥
खेचरनुं बहोंतेर सहसनुं, उरपरिनुं त्रेपन हजार रे;
भुजपरिनुं बेंतालीश सहसनुं, ए त्रण संमूर्छिम धार रे. जि० ॥ १८ ॥
गर्भज नरनुं त्रण पल्यनुं, जघन्यथी भिन्न मुहूर्त रे;
दश सहस वरस व्यतरतणुं, उत्कृष्ट पल्यनुं हुंत रे. जि० ॥ १९ ॥
अर्ध पल्यनुं तस देवी तणुं, लाख वरस ने पल्य शशिकेरुं रे;
सहस वरस ने पल्योपमतणुं, सूर्यनुं ग्रहनुं पल्य धारुं रे. जि० ॥ २० ॥
चंद्र सूर्य ने ग्रह देवीतणुं, निज आयु अरध करी दीयो रे;
अर्ध पल्य तथा पा पल्यनुं, नक्षत्र तारानुं लहीयो रे जि० ॥ २१ ॥
चोथो आठमो भाग झाझेरडो, पल्यनो देवीनो मान रे;
बे सागर सोहम जाणीए, बे उदधि झाझेरां ईशान रे. जि० ॥ २२ ॥
एक पल्य तथा अधिकेरडुं, जघन्य आउखुं सारो रे;
सात सागर अथ झाझेरडुं, त्रीजे ने चोथे उदारो रे. जि० ॥ २३ ॥
बे सागर अधिकेरडुं, आयु जघन्य कह्युं तास रे;
हवे उत्कृष्ट अनुक्रमे कहुं सुणजो ते धरी उल्लास रे. जि० ॥ २४ ॥

दश चउद सत्तर अष्टादश, सागरनो अनुक्रमे जाणी रे;
आगळे एकेक वधारीए, एकत्रीश ग्रैवेक लगे आणी रे. जि० ॥ २५ ॥
तेत्रीश सागर विजयादिके, चारने एकत्रीश जघन्य रे;
आगळने[1] उत्कृष्ट जघन्य ते, उत्तरनुं[2] धारो सज्जन रे. जि० ॥ २६ ॥

॥ ढाळ ४ थी. ॥

(राग : देशी-एकत्रीशानी...)

(द्वार-१९)[3] थावर पंचने रे, चार पर्याप्ति आगली,
विगलेंद्रियने रे, टाळो मन एक छेहली;
शेष सर्वने रे, षट् पर्याप्ति द्वारे भणी,
(द्वार-२०) द्वार वीशमुं रे, भाखे हवे त्रिभुवन धणी ॥१ ॥
(त्रुटक) मनुष्य तिरि विगलेंद्रि पण ए दंडके त्रण आहार ए,
शेषने कवल आहार टाळी, दोय आहार निरधार ए;
(द्वार-२१) तिरि पंचेंद्रि मनुज मांहि नारकी जाए सहि,
आवे पण ए बिहुमांथी पावे वेदना बहुतही ॥२॥
(ढाळ) व्यंतर ज्योतिषी रे, भुवनपति वळी जाणीए;
सोहम ईशान रे, पांच दंडक मांहि आणीए;
पृथ्वी अप् रे, वण तिरि पंचेंद्रिय मनु,
उपजे तिहां रे, तिरि पंचेंद्रि मनुज ननु ॥३॥
(त्रुटक) त्रीजाथी सहसार जावत, गत्यागति मनु तीरितणी,
नवमाथी सर्वार्थसिद्धे, मनुजनी जिनवरे भणी;
चोवीशमांहे मनुज जाए, आय तेउ वाउ विणु,
चोवीशमांहे गत्यागति करे, तिरि पंचेंद्रिय घणुं ॥४॥

---

(१) सर्वार्थसिद्धने (२) अनुत्तर विमानवाळानुं (३) पर्याप्ति छ होय छे।

(ढाळ) गति आगति रे, विगलेंद्रिने दश दंडके;
तिरि पंचेंद्रि रे, थावर विगल मनुज जीके;
भू अप् वणने रे, एहीज दशनी गति कही,
त्रेवीशमां रे, नारक विणु आगति लही ॥ ५ ॥

(त्रुटक) नवनी गति आगति दशनी, तेउ वाउने तदा,
थावर विगलतिरि पचेंद्रि, मनुज सहि करो जदा;
श्री वीर जिनवर तणा पदयुग-पद्मने अवलंबतां,
गत्यागति सवि दूर थाए, पामीए सुख शाश्वता ॥ ६ ॥

॥ ढाळ ५ मी ॥

(चोपाइनी देशी)

(द्वार-२२)

नरक थावर विगल नपुं वेद, देवने पुं स्त्री वेद मन वेद[१];
तिरि पंचेंद्रि मनुज त्रण जाण, हवे भुवन[२] द्वार मन भाण ॥१॥
सात नरकना अनुक्रमे सुणी, त्रीश पचवीश पन्नर दश त्रीणि;
लाख शब्द सयले जोडीए, छठ्ठीए लखमां पण छोडीए[३] ॥२॥
सातमीए पण[४] नरकावास, चोराशी लख सर्व निवास;
चोत्रिश चोयालिश अडत्रीश, नवमी निकाय विना[५] चालीश ॥३॥
नवमीने पचास उदार, लक्ष शब्द सघळे विस्तार;
दक्षिण दिशे दश इंद्रना एह, चउ कोडि षट् लख सर्व गुणेह ॥४॥
हवे उत्तर दश इंद्रना कहुं, ऊणा प्रत्येके चउ लख लहुं;
सात कोडि ने बहोंतेर लाख, सर्व थइ ए जिनवर भाख ॥५॥
एक लाख एंशी सहस जोजन, रत्नप्रभा पिंड भाखे जिन;
सहस योजन ऊपरि[६] अध टाल, वचमां भुवनपतिने भाळ ॥६॥

---

(१) जाण (२) द्वार-२३ (३) एक लाखमां पांच ओछा करीए (४) पांच (५) छ निकायमां चाळीश-चाळीश लाख (६) ऊपर ने नीचे।

संख्य असंख्यात जोजन मान, भवन कह्या छे तेहने थान;
लोकव्यापी सूक्ष्म थावरा, बादर देशे कहे जिनवरा ॥७॥
बादर अग्नि मनुज ए दोय, अढी द्वीपमां कहीए सोय;
ऊपरी सहस जोजनमां थकी, ऊपरी[१] अध शत जोजन मुकी ॥८॥
नगर असंख्याता तिहां कह्यां, नानां भरत जेवडां लह्यां;
महाविदेह सम मध्यम जाण, मोटां जंबूद्वीप प्रमाण ॥९॥
संभूतल पृथ्वी मर्याद, सातशें नेवुं जोजन संवाद;
ताराथी दश जोजन रवि, एंशी जोजन तिहांथी शशि भवि ॥१०॥
नक्षत्र बुध जोजन चार चार, शुक्र गुरु मंगल शनि त्रण धार;
ज्योतिषीना छे असंख्य विमान, हवे देवलोकनां संख्या जाण ॥११॥
बत्रीश अडवीश बार अड चार, लाख शब्द जोडीए उदार;
पचास चालीश ने छ हजार, आनत प्राणते चउ शत धार ॥१२॥
आरण अच्युते त्रणसें रह्या, ए मान विमान संख्यामां लह्या;
प्रथम त्रिके एकसो अग्यार, बीजे एकसो सात विचार ॥१३॥
त्रीजे सो ने उपरि पंच, अनुत्तरमां पण पुण्यनो संच;
बार जोजन उंची सिद्धशिला, प्राण[२] कहुं हवे दश मांहीला ॥१४॥
फरस इंद्री तनु बळ श्वासोश्वास, आउखुं ए थावर होय तास;
रस इंद्री ने वचन सहित, बेइंद्रियने षट् ए रीत ॥१५॥
नाक सहित तेइंद्रिने सात, चौरेंद्रिने चक्षु अवदात;
मन ने श्रोत्र इंद्रिय ए युत, शेष दंडकने दश ए उत्त ॥१६॥

---

(१) ऊपर अने नीचे (२) प्राण दश होय छे।

॥ ढाल ૬ ठ्ठी ॥ (द्वार૨૫)

(राग : ऊँचा अंबरथी आवोने प्रभुजी...)

नव निधान चौद रतन ए, भाख्या भगवंते;
चक्र[1] छत्र[2] दंड[3] असि[4] बलि, कांगणी[5] चर्म[6] मणि[7].
ते नमिये जिनरायने ॥१॥

सात एकेंद्रिय रतन ए, गाथापति[8] सेनापति[9];
पुरोहित[10] वार्धिक[11] अश्व[12], गज[13] स्त्री[14] संपत्ति. ते० ॥२॥
तीर्थंकर चक्री बळ वासु, केवलि साधु श्राद्ध;
समकिति मंडळिक मळि, सवि त्रेवीश लाधु. ते० ॥३॥
पहेली नरकनो नीकळ्यो, सोळ संपदा पामे;
सात एकेंद्रिय टाळीने, गुणज्यो इणे ठामे. ते० ॥४॥
बीजीनो पंदर चक्री बिना, त्रीजीनो तेर;
बल वासुदेव ए टाळजो, चोथीनो बार. ते० ॥५॥
तीर्थंकर विणु पांचमीनो, पामे अगीआर;
केवली विणु दश छठ्ठीनो, साधु विणु निरधार. ते० ॥६॥
अश्व गज समकित त्रण, सातमीनो जाण;
भुवनपति वण ज्योतिषी, एकवीश लहे ठाण. ते० ॥७॥
तीर्थंकर वासुदेव विना, भू अप् वण नर तिरीनो;
तीर्थंकर चक्री बल वासु, विणु ओगणीश कीनो. ते० ॥८॥
तेउ वाउनो नीकळ्यो, अश्व गज ए दोय;
सात एकेंद्रि इम नव, एमे जीव कोय. ते० ॥९॥
विगल अढार संपद लहे, तीर्थंकर चक्री बल वासु;
केवली ए पांच टाळजो, सोहम ईशाने ते वीशुं. ते० ॥१०॥
पहेली नरक परे जाणजो, सोल संपद इहां;
त्रीजाथी आठमा लगे, नवमाथी चौद जिहां. ते० ॥११॥

एकेंद्रि अश्व गज टाळजो, अनुत्तरना कहिए;
आठ निधान वासुदेव विना, द्वार संपदा लहिए. ते० ॥१२॥
(द्वार-૨૬) करणीरूप धर्म मनु तथा, तिरि पंचेंद्रिमांहि;
बावीश दंडके ते नहि, धर्म द्वार ए त्यांहि. ते० ॥१३॥
(द्वार-૨૭)[1] भू अप् तेउ वाउ सत[2], दश लाख प्रत्येक;
साधारण वण मनु चौद, चउ चउ लख तिरि नरक ते० ॥१४॥
लाख लाख दो दो विगलेंद्रिमां, देवने लख चार;
इम चोराशी लख जीवायोनिमां, नव नव अवतार ते० ॥१५॥

(द्वार-૨૮) पचवीश छवीश वार सात, त्रण सात अडवीश;
सात आठ नव बार लाख, कुलकोटि जगीश. ते० ॥१६॥
साडी बार दश बार दश, नव लाख कुलकोडि;
नारक देव अनुक्रमे, पांच थावर जोडि. ते० ॥१७॥
बि ति चौरेंद्रि अनुक्रमे, मनुज जलचर थलचर;
खेचर उरपरि भुजपरि, अनुक्रमे सवि विस्तार. ते० ॥१८॥
(द्वार-૨૯) गर्भज नर थोडा सर्वथी, षड् गुण असंख्याता;
बादर अग्नि वैमानिक, भुवनपति आख्याता. ते० ॥१९॥
नारक व्यंतर ज्योतिषि, संख्य गुण चउरिंदि;
त्रण विशेषाधिक लहो, पंचेंद्रि बि तिइंदि. ते० ॥२०॥
त्रण असंख्यातगुण करी, पृथ्वी अपकाय;
चौदमे बोल वनस्पति, अनंत गुण थाय. ते० ॥२१॥
उत्तम विजय गुरुतणा, साधु कहेवाय;
भावनगरमां वीरना पद्मविजय गुण गाय. ते० ॥२२॥

॥ वीरजिनस्तुतिगर्भित चोवीश दंडक स्तवनम् ॥

(पू. पद्मविजयजी म.सा. कृत....)

---

(૧) जीवायोनि कुल चोराशी लाख होय छे (૨) सात लाख।

१९. चोवीश दंडकनुं स्तवन (द्वितीय)

(गति आगतिनुं स्वरूप)

॥ ढाळ १ ली ॥

(राग : जिंदगी प्यार का गीत है...)

पूरे मनोरथ पास जिनेश्वर, एह करुं अरदासजी;
तारण तरण बिरुद तुज सांभळी, आव्यो ताहरी पासजी पू० ॥ १ ॥
एणे संसार समुद्र अथागे, भमीयो भवजल मांहिजी;
गीलगीलीयो[१] जीम आयो गीलतो, साहेब हाथे साहीजी पूरे० ॥ २ ॥
तुं ज्ञानी तो पण तुज आगळ, वीतक कहीए बातजी;
चोवीशे दंडके हुं फरीओ, वर्णवुं एह विख्यातजी पूरे० ॥ ३ ॥
साते नरक तणो एक दंडक, असुरादिक दश जाणजी;
पांच थावर ने त्रण विकलेंद्रिय,ओगणीश गणतां आणजी पूरे० ॥ ४ ॥
पंचेंद्रिय तिर्यंच ने मानव, एह थया एकवीशजी;
व्यंतर ज्योतिषी ने वैमानिक, एक दंडक चोवीशजी पूरे० ॥ ५ ॥
पंचेंद्रिय तिर्यंच ने मानव, पयाप्ता जे होयजी;
ए सघळा देवमांहे उपजे, एम देव आगति दोयजी पूरे० ॥ ६ ॥
असंख्यात आयुषे नर तिरि, निश्चे देवज थायजी;
निज आयुषे सम के ओछे, पण अधिके नव जायजी पूरे० ॥ ७ ॥
भुवनपति ने व्यंतर मांहे, संमूर्छित तिर्यंचजी;
स्वर्ग आठमे तांइ पहुंचे, गर्भज सुकृत संचजी पूरे० ॥ ८ ॥
आयु संख्याने जे गर्भज, नर तिर्यंच विवेकजी;
बादर पृथ्वी ने वळी पाणी, वनस्पति प्रत्येकजी पूरे० ॥ ९ ॥
पर्याप्ता एणए पांचे ठामे, आवी उपजे देवजी;
एणे पांचे माही पण आगे, अधिकाइ कहुं हेवजी पूरे० ॥ १० ॥

---

(१) गीलती तियो नामे सर्प जेम गळतो गळतो आवे तेम।

त्रीजा स्वर्ग थकी मांडीने सुर, एकेंद्रिय नवी थायजी;
आठमाथी ऊपरला सघळा, मानवमांहि जायजी. पूरे० ॥ ११ ॥

॥ ढाळ २ जी ॥

(राग : रघुकुल रीत सदा चली आई...)

नरक तणी गति आगति एणी पेरे, जीव भमे रे संसार;
दोय गति ने दोय आगति जाणीए, वळी विशेष विचार ॥ १ ॥
संख्याते आयुष् पर्याप्ता पंचेंद्रिय तिर्यंच;
तिमहीज मनुष्य एहीज नरक में, जाए पाप प्रपंच. ॥ २ ॥
प्रथम नरक लगे जाए असनीयो[१], गोह नकुळ तीम बीय;
गीध प्रमुख पंखी त्रीजी लगे, सिंह प्रमुख चोथी जाय. ॥ ३ ॥
पांचमी नरके सीमा सापनी, छठ्ठी लगे स्त्री जाय;
सातमी नरके माणस माछलां, उपजे गर्भज थाय. ॥ ४ ॥
नरक थकी आवे बीहुं दंडके, तीर्यंच के नर थाय;
ते पण गर्भज ने पर्याप्ता, संख्या ते ज सुहाय. ॥ ५ ॥
नारकियाने नरक थकी निकळ्या, जे फळ प्राप्ति होय;
उत्कृष्ट भांगे करी ते कहुं, पण निश्चे नहीं कोय. ॥ ६ ॥
प्रथम नरक थकी चवी चक्रवर्ती होये, बीजी हरि बळदेव;
त्रीजी लगे तीर्थंकर पद लहे, चोथीए केवल हेव. ॥ ७ ॥
पांचमी नरकनो सर्व विरति लहे, छठ्ठीए देशविरत;
सातमी नरक थकी समकित लहे, न होवे अधिक निमित्त ॥ ८ ॥

---

[१] असंज्ञी

॥ ढाळ ३ जी ॥

(राग : दुल्हे का सहेरा सुहाना लगता है...)

मानव गति विण मुक्ति होवे नहि रे, एहनो एह अधिकार;
आयु संख्याते नर सहु दंडके रे, आवी लहे अवतार मा० ॥१॥
तेउ वाउ दंडक बे तजी रे, बीजा ते बावीश;
तिहांथी आव्या थाये मानवी रे, सुख दुःख पुन्य गरिष्ठ मा० ॥२॥
नर तिर्यंच असंख्ये आयुषे रे, सातमी नरकना तेम;
तिहांथी चवीने मनुज होवे नहि रे, अरिहंते भाख्युं एम मा० ॥३॥
वासुदेव बलदेव तथा वली रे, चक्रवर्ती अरिहंत;
स्वर्ग नरकना आया ते होवे रे, नर तिर्यंच न होवंत मा० ॥४॥
चौविह देव थकी चवी उपजे रे, चक्रवर्ती ने बळदेव;
वासुदेव तीर्थंकर ते होवे रे, वैमानिकथी हेव मा० ॥५॥

॥ ढाळ ४ थी ॥

(राग : ए मेरे वतन के लोगो...)

हवे तिर्यंच तणी गति, आगति कहीए अशेष ।
जीव भमे एणी परे, भवमांहि कर्म विशेष ॥
आयु संख्याते, जे नर तिर्यंच विचार ।
ते सघळा तिर्यंच, मांहे लहे अवतार ॥ १ ॥
जिणे तिर्यंच मांहे, आवे नारक देव ।
ते कह्यो पहेले तिण, कारण न कहुं हेव ॥
पंचेंद्रिय तिर्यंच, संख्याते आयुषे जेह ।
ते मरी चउगति मांहे जावे इहां न संदेह ॥ २ ॥
थावर पंच त्रण, विगलेंद्रि आठे कहावे ।
तिहांथी आयु संख्याते, नर तिर्यंचमां आवे ॥
विकल चवी लहे सर्वविरति, ते पण मोक्ष न पावे ।
तेउ वाउथी आयो, तेहने समकित नावे ॥ ३ ॥
नारक वर्जीने, सघळा ए जीव संसार ।
पृथ्वी आउ वनस्पति, मांहे लहे अवतार ॥
ए त्रण इहांथी चवी, ते आवे दश ठामे ।
थावर विगल तिरि, नरमांहे उत्पत्ति पामे ॥ ४ ॥
पृथ्वीकाय आदे, लह दश दंडक एह ।
तेउ बाउ मांहे, आवी उपजे तेह ॥
मनुष्य विना नव मांहे, तेउ वाउ बे जावे ।
विगलेंद्रिय ते दशमांही, जावे पाछा ही आवे ॥ ५ ॥
एम अनादि तणो ए, मिथ्या जीव एकंत ।
वनस्पति मांहे तिहां, रहिओ काल अनंत ॥
पृथ्वी पाणि अग्नि, अने चोथो वळी वाय ।
कालचक्र असंख्याता, त्यांइ जीव रहाय ॥ ६ ॥
बेइंद्रिय तेइंद्रियने, वली चौरेंद्रि मझार ।
संख्याता वरसा लगे, भमीयो कर्म प्रकार ॥
सात आठ भव लगे, नर तिर्यंच में रहियो ।
हवे मानव भव लहिने, साधुनो वेष में ग्रहियो ॥ ७ ॥
राग द्वेष छुटे नहि, किम थाये छुटकबार ।
पीण छे साध्य मन माहरे, तुंहीज एक आधार ॥
तारण तरण में त्रिकरण, शुद्धे अरिहंत लाधो ।
हवे संसारतणा भव में, भमवो पुद्गल आधो ॥ ८ ॥
तुं मनोवांछित पूरण, आपदा चूरण स्वामी ।
ताहरी सेव लहिने में, हवे नव निधि पामी ॥

अवर कोईने इच्छुं नहि, इण भव तुंहि ज देव ।
शुद्ध मने एक ताहरी, होजो भव भव सेव ॥ ९ ॥

(कळश)

इम सकल सुखकर नगर जेसलमेर महीमा दिने दिने ।
संवत सत्तर ओगणत्रीशे, दिवस दीवाली तणे ॥
गुरु विमळचंद समान वाचक, विजयहर्ष सुशिष्य ए ।
श्री पार्श्वना गुण एम गावे, धर्मचंद्र जगीश ए ॥ १ ॥

(पू. धर्मचंद्रजी म.सा. कृत...)

॥ इति चोवीश दंडकनुं स्तवन (बीजुं) ॥

२०. ॥ छ आरा स्वरूप कथक - श्रीमहावीरस्वामी का स्तवन ॥

(दुहा)

सकल जिणंद पाये नमी, पामी परमानंद;
दोय कर जोडी बिनवुं, चोवीशमो जिणंद ॥ १ ॥
जंबूद्वीप भरत क्षेत्र, मगध देश मोझार;
राजगृही रळीयामणी, नयरी नाम उदार ॥ २ ॥
तीहां कणे स्वामी समोसर्या, चोवीशमो जिणंद;
चोसठ इंद्रे मळी रच्युं, समवसरण आणंद ॥ ३ ॥
सुर नर व्यंतर ज्योतिषी, विद्याधरनी कोडाकोडी;
बारे पर्षदा तिहां सुणे, धर्म सर्वे कर जोडी ॥ ४ ॥
गौतम स्वामी पूछीया. सुणे ते सुर नर कोडी;
कालचक्र केम नीपजे, बोले बे कर जोडी ॥ ५ ॥

॥ ढाल १ ली ॥

(राग : चाँद सितारे फूल और खुशबु...)

आहे चरम जिणेसर इम भणे, सहु सुणो मन उल्लास;
कालचक्र इम नीपजे, प्रथम समय लीयो तास. आ० ॥ १ ॥
पोयणी पानज कुंअलां, बत्रीश मेलो सोइ;
सबळ पुरुष सोये करी, मतिशुं बींधे कोई. आ० ॥ २ ॥
एक पान जब वींधाय, बीजा लगे सोय जाय;
चरम जिनेश्वर इम भणे, असंख्य समय तिहां थाय आ० ॥ ३ ॥
असंख्य समये हुए आवलि, आवलि केरुं ए मान;
दोइसें छप्पन जब मेलीए, क्षुल्लक भव एक ताम. आ० ॥ ४ ॥
एक कोडी अति आगली, ऊपरे सडसठ लाख;
सहस सत्योतेर दोय सें, सोल केरी भाख. आ० ॥ ५ ॥
एटली मेली आवली, मुहूर्त तणुं एक मान;
दोय मुहूर्त बीजा अछे, तास छुल्लक भव ताम. आ० ॥ ६ ॥
त्रीश मुहूर्त जब मेलीए, अहोरात दिन एक थाय;
पनरे दिने पक्ष होइ, मासे बारे वरसे जाइ. आ० ॥ ७ ॥
असंख्याता वरस जब मेलीए, पल्योपम एक कहाय;
चरम जिनेश्वर इम कह्युं, ते सहु साधु सुहाय आ० ॥ ८ ॥

॥ ढाल २ जी ॥

(राग : बाबुल की दुआए लेती जा...)

बादर परमाणु जाणुं सही, तेणे आठ त्रसरेणु कही;
ते आठ त्रसरेणुं विचार, आठ रेणु वालाग्र उदार ॥ १ ॥
वालाग्र आठ एक लीख, आठ लीखे जूका सीख;
जूका आठे एक जव कह्युं, आठे जवे ते अंगुल भण्युं ॥ २ ॥
ए षट् अंगुले पाव प्रमाण, बे पावे एक वेंतनुं मान;
बे वेंते एक हाथ प्रमाण, चीहुं हाथे एक धनुषनुं मान ॥ ३ ॥
बीहुं सहस धनुषे गाउ एक, चीहुं गाउए जोयण एक;
कूवो एक ऊंडो एटलो, पहोळो लांबो सम तेटलो ॥ ४ ॥

रोमखंडे एवे बाले भरे, सिद्धांते बोल्युं तिम करे;
जुगल जण्या साते दिन बाल, तस आंगुल शिर लीजे वाल ॥ ५ ॥
सात सात आठे पावडी, खंड कीधा त्यारे संख्या चढी;
बीश लाख सत्ताणुं सहस, एकसो बावन अधिक कहीश ॥ ६ ॥
केवलज्ञानी आगे कह्या, रोमखंड असंख्याता थया;
पुनरपि नावे संलेखना, असंख्यात मननी कीजे कल्पना ॥ ७ ॥
ते लइ एक कूवो भर्यो, निश्चल ठांसी गाढो कर्यो;
जल भेदी नवी आगे बले, बेठो वाइ नवी उछले ॥ ८ ॥
वरसां सोए एक काढे अंश, यदा तदा ते होय निरअंश;
एह पल्योपम नाम उदार, कोडाकोडी दस एक सागर सार ॥ ९ ॥
ते सागर दस कोडाकोडी, एक उत्सर्पिणी एहवी जोडी;
कालचक्र दोइ एटले थयो, पुद्‌गल मान अनेरो कह्यो ॥ १० ॥
पुद्‌गल केरा चार प्रकार, द्रव्य क्षेत्र काल भाव विचार;
चिहुं तणा वळी कीजे आठ, सूक्ष्म बादर तमो ए घाट ॥ ११ ॥
बादरनी परे एहवी सुणो, कालचक्र एहना समय सुखो;
एटला मरण करे जो सोय, बादर पुद्‌गल पूरा होय ॥ १२ ॥
चक्र ते पहेले समे, बीजा मरण अनेरा गमे;
बीजो कालचक्र लगे यदा बीजे समये मरण होय तदा ॥ १३ ॥
इम सहु समय पूरा करे, सूक्ष्म पुद्‌गल इणी परे भरे;
चिहुं तणी परे एहज सही, एवी बात जिनेश्वर कही ॥ १४ ॥
उत्सर्पिणी षट आरा होय, जिनवर देखाडे सोय;
ते पण सहु ए सुणो उल्लासे, गौतम पूछे जिन पासे ॥ १५ ॥

॥ ढाळ ३ जी ॥

(राग : मेहंदि ते वावी... गरबा)

पहेलो आरो एम जाणीए ए,
कोडाकोडी सागर चार के; सुषम सुषमो ए ।
त्रण पल्योपम आउखुं ए,
काया गाउ त्रणनो मान के; युगलीयां जाणजो ए ॥ १ ॥
बीजो आरो सुषम जाणजो ए,
कोडाकोडी त्रणनो मान के; सागर संख्या कही ए ।
दोय पल्योपम आउखुं ए,
काया गाउ दोयनो मान के; सहु सुख भोगवे ए ॥ २ ॥
त्रीजो आरो सुषम दुषमो ए,
काया गाउ एकनो मान के; पल्योपमनुं आउखुं ए ॥ ३ ॥
दोय कोडाकोडी जे भलो ए,
आवीयो ते तणे अंत के; पूर्व कोडी ऊणी थाकतां ए ॥ ४ ॥
प्रथम जिणंद तिहां जनमीया ए,
नाभि कुलगर घरे चंद के; युगल तेणे वारीयो ए ॥ ५ ॥
राजनीति तेणे थापीयो ए,
मांडीयो शुभ व्यवहार के; आरो त्रीजो ए सही ॥ ६ ॥
चोथो आरो दुषम सुषमो ए,
कोडाकोडी एकनुं मान के; त्रेवीश जिन तीहां हुआ ए ॥ ७ ॥
बेंतालीश सहस उणा अछे ए,
बोलीया श्रीवर्धमान के; चरम जिन इम कहे ए ॥ ८ ॥
चडत पडत तीहां आउखां ए,
कायानो एहीज मान के; श्री जिनधर्म अति भलो ए ॥ ९ ॥

चरम जिनेश्वर भाखीयो ए,
पंचम आरानो मान के; दुःषम ते सहु कहे ए ॥ १० ॥
एकवीश सहस एवां जाणजो ए,
काया सात हाथ जाण के; ऊणो घणो आउखो ए ॥ ११ ॥
ठाकुर अति अन्यायीया ए,
मेले मन वर्तशे लोक के; आरति[१] मन सहु करे ए ॥ १२ ॥
लोक पाखंडे घणुं राचशे ए,
साधु ऊपर थोडलो भाव के; बहुला मत व्यापशे, ए ॥ १३ ॥
जिनधर्म वरतशे थोडलो ए,
आगिया सुपन मान के; उत्तम जन थोडला ए ॥ १४ ॥
इस्ये मारग सहु चालशे ए,
दुप्पसह लगे व्यवहार के; परंपरा ज्यां होशे ए ॥ १५ ॥
तिहां एक साधु ने साधवी,
श्रावक श्राविका एक के; आगम एक वरतशे ए ॥ १६ ॥
अतिशय ज्ञान गुरुने नमो ए,
टाळे मनना संदेह के; सोय कल्पे पहोंचशे ए ॥ १७ ॥
इस्यो आरो जाशे पांचमो ए,
आवशे तेह तणो अंत के; उत्पात घणा वरतशे ए ॥ १८ ॥

॥ ढाल ४ थी ॥

(राग : ते दिन क्यारे आवशे... / मैली चादर ओढ के कैसे...)

आहे छठ्ठो आरो एहवो आवशे, जाणे जिनवर तेह;
पृथ्वी प्रलय थायशे, वरसशे विरुआ मेह. आ० ॥ १ ॥

---

(१) आर्तध्यान।

तावडे तरडशे डुंगरा, वाये उडी उडी जाय;
सहु समी होयशे मेदिनी, खाडने सेवंत रे. आ० ॥ २ ॥
त्यारे प्रभु गोयम बोलिया, विनव्या जिनवर राय;
किहां रहेशे माणस मेदिनी, पृथ्वी बीजे केम थाय. आ० ॥ ३ ॥
तिहां इम जिनवरे भाखीयुं, अमृत समानी वाण;
वैताढ्य गिरि छे शाश्वतो, गंगा सिंधु नदी जाण. आ० ॥ ४ ॥
ते बील वासी तिहां रहे, मनुष्यां केरी वखाण;
बहोंतेर बील तिहां किण अछे, बीज तणुं ते ठाम. आ० ॥ ५ ॥
काया तेनी पुण हाथ छे, सोळ वरसनो आय;
छ वरसे स्त्री गरभ धरे, दुःखमांहे दुःख थाय. आ० ॥ ६ ॥
अति घणा ताप तिहां पडे, असराल वायशे वाय;
रात्रे ते बाहिर नीसरे, दिवसे बील मांहे जाय आ० ॥ ७ ॥
नवद्वार श्रोत्र तिहां रहे, विरूइ गंधाशे काय;
सहु भक्षण करशे माछलां, मरी ए दुर्गति जाय. आ० ॥ ८ ॥
एकवीश सहस इस्यां होशे, दश क्षेत्रे इम जाणी;
उत्कृष्टा पांचे अछे, महाविदेह वखाण. आ० ॥ ९ ॥
तिहां सदा हुए केवली, जिनधर्म तणी नहिं हाण;
समवसरण सुखदायी, जिनवर तणी इसी वाण आ० ॥ १० ॥
पूर्व कोडीनुं आउखुं, पांचसें धनुषनी काय;
चरम जिनेश्वर इम भणे, सदैव एवुं चाल्युं जाय. आ० ॥ ११ ॥
बांभण इणी परे विनवे, वीर जिणंद अवधार;
प्रभु तोरे पाये नमुं, छठ्ठे आरे जन्म निवार. आ० ॥ १२ ॥

॥ ढाल ५ मी ॥

(राग : यह है पावनभूमि...)

इम हर्ष धरीने, स्तवीयो वीर जिणंद;
राधनपुर मंडन, पाय प्रणमे सुर नर वृंद ॥ १ ॥

में पुण्य पसाये, पाम्या जिनवर पाय;
मुज पाप पडल सवि, दुष्कृत दूरे जाय ॥ २ ॥
श्री तपगच्छ नायक, विजयदान सूरींद;
तस पाय प्रणमीने, सेवे सुरनर वृंद ॥ ३ ॥
तस नामे मुजने, टळीयो मुज मिथ्यात;
सेवंतां पाम्यो, जिन धर्म जगत विख्यात ॥ ४ ॥
संवत् सय सोलह, इग्यारोत्तर मान;
आसो शुद पुनम, रविवार शुभध्यान ॥ ५ ॥

॥ कळश ॥

इम थुणयो जिनवीर वीर सुखकर, राधनपुर वर मंडणो;
तस पाय पामी शीष नामी, दुरिय दुर्गति खंडणो;
सेवे सुरासुर सुणे भासुर, गर्भवास निरुत्तरो,
द्विज भणे देवीदास सेवक, सकल संघ मंगल करो ॥१॥

(पू. द्विज देवीदासजी कृत....)

(इति षट्आरा स्वरूप श्री महावीर जिन स्तवन....)

२१. ॥ अथ लोकस्वरूप-भावना ॥

कटिस्थकरवैशाख स्थानकस्थनराकृतिम् ।
द्रव्यैः पूर्णं स्मरेल्लोकं स्थित्युत्पत्तिव्ययात्मकैः ॥ १ ॥
लोकोजगत्त्रयाकीर्णो भुवःसप्तात्रवेष्टिता ।
घनांभोधिमहावात तनुवातैर्महाबलैः ॥ २ ॥
वैत्रासनसमो ऽधस्तान्मध्यतो झल्लरीनिभः ।
अग्रेमूरजसंकाशो लोकःस्यादेवमाकृति ॥ ३ ॥
निष्पादितोनकेनापि न धृतः केनचिच्चसः ।
स्वयंसिद्धोनिराधारो गगनेकिन्त्ववस्थितः ॥ ४ ॥

२२. ॥ अथ लोकस्वभावभावना ॥

वैशाखस्थानस्थित-कटिस्थकरयुगनराऽऽकृतिर्लोकः ।
भवति द्रव्यैः पूर्णः, स्थित्युत्पत्तिव्ययाऽऽक्रान्तैः ॥१॥
ऊर्ध्वतिर्यगधोभेदैः, स त्रेधा जगदे जिनैः ।
रुचकादष्टप्रदेश-मेरुमध्यव्यवस्थितात् ॥२॥
नवयोजनशत्यूर्ध्व-मधोभागेऽपि सा तथा ।
एतत्प्रमाणकस्तिर्यग्लोकश्चितपदार्थभृत् ॥३॥
ऊर्ध्वलोकस्तदुपरि, सप्तरज्जुप्रमाणकः ।
एतत्प्रमाणसंयुक्त-श्चाधोलोकोऽपि कीर्तितः ॥४॥
रत्नप्रभाप्रभृतयः, पृथिव्यः सप्त वेष्टिताः ।
धनोदधिघनवात-तनुवातैस्तमोघनाः ॥५॥
तृष्णाक्षुधावधाऽऽघात-भेदनच्छेदनाऽऽदिभिः ।
दुःखानिः नारकास्तत्र, वेदयन्ते निरन्तरम् ॥६॥
प्रथमा पृथिवी पिण्डे, योजनानां सहस्त्रकाः ।
अशीतिर्लक्षमेकं च, तत्रोपरि सहस्त्रकम् ॥७॥
अधश्च मुक्त्वा पिण्डस्य, शेषस्याभ्यन्तरे पुनः ।
भवनाधिपदेवानां, भवनानि जगुर्जिनाः ॥८॥
असुरा नागास्तडितः, सुपर्णा अग्नयोऽनिलाः ।
स्तनिताब्धिद्विपदिशः, कुमारान्ता दशेति ते ॥९॥
व्यवस्थिता पुनः सर्वे, दक्षिणोत्तरयोर्दिशोः ।
तत्रासुराणां चमरो, दक्षिणावासिनां विभुः ॥१०॥
उदीच्यानां बलिर्नाग-कुमाराऽऽदेर्यथाक्रमम् ।
धरणो भूतानन्दश्च हरिर्हरिस्सहस्तथा ॥११॥
वेणुदेवो वेणुदाली, चाग्निशिखाग्निमाणवौ ।
वेलम्बः प्रभञ्जनश्च, सुघोषमहाघोषकौ ॥१२॥

जलकान्तो जलप्रभ-स्ततः पूर्णो विशिष्टकः ।
अमितो मितवाहन, इन्द्राऽऽग्नेया द्वयोर्दिशोः ॥१३॥
अस्या एव पृथिव्या, उपरितने मुक्तयोजनसहस्रम् ।
योजनशतमध उपरि च, मुक्त्वाऽष्टसु योजनशतेषु ॥१४॥
पिशाचाऽऽद्यष्टभेदानां, व्यन्तराणां तरस्विनाम् ।
नगराणि भवन्त्यत्र, दक्षिणोत्तरयोर्दिशोः ॥१५॥
पिशाचा भूता यक्षाश्च, राक्षसाः किन्नरास्तथा ।
किंपुरुषा महोरगा, गन्धर्वा इति तेऽष्टधा ॥१६॥
दक्षिणोत्तरभागेन, तेषामपि च तस्थुषाम् ।
द्वौ द्वाविन्द्रौ समाम्नातौ, यथासङ्ख्यं सुबुद्धिभिः ॥१७॥
कालस्ततो महाकालः, सुरूपः प्रतिरूपकः ।
पूर्णभद्रो माणिभद्रो, भीमो भीमो महाऽऽदिकः ॥१८॥
किन्नरकिंपुरुषौ सत्पुरुषमहापुरुषनामकौ तदनु ।
अतिकायमहाकायौ, गीतरतिश्चैव गीतयशाः ॥१९॥
अस्या एव पृथिव्या,उपरि च योजनशतं हि यन्मुक्तम् ।
तन्मध्यादध उपरि च, योजनदशकं परित्यज्य ॥२०॥
मध्येऽशीताविहयोजनेषु तिष्ठन्ति वनचरनिकायाः ।
अप्रज्ञप्तिकमुख्या अष्टावल्पर्धिकाः किञ्चित् ॥२१॥
अत्र प्रतिनिकायं च, द्वौ द्वाविन्द्रौ महाद्युती ।
दक्षिणोत्तरभागेन, विज्ञातव्यौ मनीषिभिः ॥२२॥
योजनलक्षोन्नतिना, स्थितेन मध्ये सुवर्णमयवपुषा ।
मेरुगिरिणा विशिष्टे, जम्बूद्वीपे भवन्त्यत्र ॥२३॥
वर्षाणि भारताऽऽदीनि, सप्त वर्षधरास्तथा ।
पर्वता हिमवन्मुख्याः, षट् शाश्वतजिनाऽऽलयाः ॥२४॥

योजनलक्षप्रमिता-जम्बूद्वीपात्परो द्विगुणमानः ।
लवणसमुद्रः परतस्तद्द्विगुणद्विगुणविस्ताराः ॥२५॥
बोधव्या धातकीखण्ड-कालोदाऽऽद्या असङ्ख्यकाः ।
स्वम्भूरमणान्ताश्च, द्वीपवारिधयः क्रमात् ॥२६॥
प्रत्येकरससम्पूर्णा-श्चत्वारस्तोयराशयः ।
त्रयो जलरसा अन्ये, सर्वेऽपीक्षुरसाः स्मृताः ॥२७॥
सुजातपरमद्रव्य-हृद्यमद्यसमोदकः ।
वारुणीवरवार्धिः स्यात्, क्षीरोदजलधिः पुनः ॥२८॥
सम्यक्कथितखण्डाऽऽदि-मुग्धदुग्धसमोदकः ।
घृतवरः सुतापित-नव्यगव्यघृतोदकः ॥२९॥
लवणब्धिस्तु लवणा-ऽऽस्वादपानीयपूरितः ।
कालोदः पुष्करवरः, स्वयम्भूरमणस्तथा ॥३०॥
मेघोदकरसाः किन्तु, कालोदजलधेर्जलम् ।
कालं गुरूपरिणामं, पुष्करोदजलं पुनः ॥३१॥
हितं लघुपरिणामं, स्वच्छस्फटिकनिर्मलम् ।
स्वयम्भूरमणस्याऽपि, जलधेर्जलमीदृशम् ॥३२॥
त्रिभागाऽऽवर्तसुचतु-र्जातकेक्षुरसोपमम् ।
शेषाऽसङ्ख्यसमुद्राणां, नीरं निगदितं जिनैः ॥३३॥
समभूमितलादूर्ध्वं, योजनशतसप्तके ।
गते नवतिसंयुक्ते, ज्योतिषां स्यादधस्तलः ॥३४॥
तस्योपरि च दशसु, योजनेषु दिवाकरः ।
तदुपर्यशीतिसङ्ख्य-योजनेषु निशाकरः ॥३५॥
तस्योपरि च विंशत्यां योजनेषु ग्रहाऽऽदयः ।
स्यादेवं योजनशतं, ज्योतिर्लोको दशोत्तरम् ॥३६॥

जम्बूद्वीपे भ्रमन्तौ च, द्वौ चन्द्रौ द्वौ च भास्करौ ।
चत्वारो लवणाम्मोधौ, चन्द्राः सूर्याश्च कीर्तिताः ॥३७॥
धातकीखण्डके चन्द्राः, सूर्याश्च द्वादशैव हि ।
कालोदे द्विचत्वारिंशच्चन्द्राः सूर्याश्च कीर्तिताः ॥३८॥
पुष्कराद्धें द्विसप्तति-श्चन्द्राः सूर्याश्च मानुषे ।
क्षेत्रे द्वीत्रिंशमिन्दूनां, सूर्याणां च शतं भवेत् ॥३९॥
मानुषोत्तरतः पञ्चा-शद्योजनसहस्त्रकैः ।
चन्द्रैरन्ततरिताः सूर्याः, सूर्यैरन्तरिताश्च ते ॥४०॥
मानुषक्षेत्रचन्द्रार्क-प्रमाणार्धप्रमाणकाः ।
तत्क्षेत्रपरिधेर्वृद्धयो, वृद्धिमन्तश्च सङ्ख्यया ॥४१॥
स्वयम्भूरमणं व्याप्य, घण्टाकार असंख्यकाः ।
शुभलेश्या मन्दलेश्या-स्तिष्ठन्ति सततं स्थिराः ॥४२॥
समभूमितलादूर्ध्वं, सार्धरज्जौ व्यवस्थितौ ।
कल्पावनल्पसम्पत्ती, सौधर्मेशाननामकौ ॥४३॥
सार्धरज्जुद्वये स्यातां, समानौ दक्षिणोत्तरौ ।
सनत्कुमारमाहेन्द्रौ, देवलोकौ मनोहरौ ॥४४॥
ऊर्ध्वलोकस्य मध्ये च, ब्रह्मलोकः प्रकीर्तितः ।
तदूर्ध्वं लान्तकः कल्पो, महाशुक्रस्ततः परम् ॥४५॥
देवलोकः सहस्त्रारो-ऽथाष्टमो रज्जुपञ्चके ।
एकेन्द्रौ चन्द्रवदवृत्ता-वानतप्राणतौ ततः ॥४६॥
रज्जुषट्के ततः स्याता-मेकेन्द्रावारणाच्युतौ ।
चन्द्रवद्वर्त्तुलावेवं, कल्पा द्वादश कीर्तिताः ॥४७॥
ग्रैवेयकास्त्रयोऽधस्त्या-स्त्रयो मध्यमकास्तथा ।
त्रयश्चोपरितनाः स्यु-रिति ग्रैवेयका नव ॥४८॥
अनुत्तरविमानानि, तदूर्ध्वं पञ्च तत्र च ।
प्राच्यां विजयमपाच्यां, वैजयन्तं प्रचक्षते ॥४९॥
प्रतीच्यां तु जयन्ताऽऽख्य-मुदीच्यामपराजितम् ।
सर्वार्थसिद्धं तन्मध्ये, सर्वोत्तमुदीरितम् ॥५०॥
स्थितिप्रभावलेश्याभि-र्विशुद्धयवधिदीप्तिभिः ।
सुखाऽऽदिभिश्च सौधर्मा-द्यावत्सर्वार्थसिद्धिदम् ॥५१॥
पूर्वपूर्वत्रिदशेभ्य-स्तेऽधिका उत्तरोत्तरे ।
हीनहीनतरा देह-गतिगर्वपरिग्रहैः ॥५२॥
घनोदधिप्रतिष्ठानाः, विमानाः कल्पयोद्वयोः ।
त्रिषु वायुप्रतिष्ठानास्त्रिषु वायूदधिस्थिताः ॥५३॥
ते व्योमविहिद्यतस्थानाः, सर्वेऽप्युपरिवर्तिनः ।
इत्यर्द्धलोकविमान-प्रतिष्ठानविधिः स्मृतः ॥५४॥
सर्वार्थसिद्धाद् द्यद्वादश, योजनेषु हिमोज्ज्वला ।
योजनपञ्चचत्वारि-शल्लक्षाऽऽयामविस्तरा ॥५५॥
मध्येऽष्टयोजनपिण्डाश्च, शुद्धस्फटिकनिर्मिताः ।
सिद्धशिलेषत्प्राग्भारा, प्रसिद्धा जिनशासने ॥५६॥
तस्या उपरि गव्यूत-त्रितयेऽतिगते सति ।
तुर्यगव्यूतिषड्भागे, स्थिताः सिद्धा निरामयाः ॥५७॥
अनन्तसुखविज्ञान-वीर्यसद्दर्शनाः सदा ।
लोकान्तस्पर्धिनोऽन्योन्या-वगाढाः शाश्वताश्च ते ॥५८॥
एनां भव्यजनस्य लोकविषयामभ्यस्यतो भावनां,
संसारैकनिबन्धने न विषयग्रामे मनो धावति ॥५९॥
किन्त्वन्यान्यपदार्थभावनसमुन्मीलत्प्रबोधोद्धुरं,
धर्मध्यानविधाविह स्थिरतरं तज्जायते सन्ततम् ॥६०॥''

("श्री अभिधान राजेन्द्र कोष" मे से साभार)

२३. ॥ लोकस्वरूपभावनास्वरूपम् ॥

अह सव्वसंगचागी,सम्मं होऊण निज्जराभागी ।
भावणनवगाऽऽसंगी, लोगठिइं पि हु तुममऽरागी ॥८७७६॥
भावेज्ज जहसरूपं, उड्ढं तिरियं अहो य उवउत्तो ।
तग्गयसचित्ताऽचित्त - सव्वदव्वस्सरूवं च ॥८७७७॥
उड्ढं तियसविमाणाऽऽदी, दीवोयहिणो असंख्या तिरियं ।
हेट्ठा य सत्त पुढवी, लोगसभावो इय समासा ॥८७७८॥
अजहट्ठिइलोगट्ठिइ - नाया न सकज्जसाहगो होइ ।
तस्सम्मपरिन्नाणा, होइ च्चिय तावससिवो व्व ॥८७७९॥

तथाहि- ''शिवराजर्षेः दृष्टांतः''...

गयउरनयरे राया, नामेण सिवो विहाय रज्जसिरिं ।
घेत्तुं तावसदिक्खं, वणवासविहारमऽल्लीणो ॥८७८०॥
सुरुम्मुहनिम्मियनिमेस-रहियनयणो तवेइ गाढतवं ।
कुणइ य नियसमयऽणुरुव-सेसकिरियाकलावं च ॥८७८१॥
एवं तवं तवितस्स, तस्स पयईए भद्दयत्तेणं ।
विब्भंगं संजायं, कम्मखओवसमओ य तहा ॥८७८२॥
अह सत्तदीवसायर - मेत्तं लोयं वियाणिउं तेणं ।
सिवरायरिसि तुट्ठो, विसिट्ठनियनाणपसरेण ॥८७८३॥
तो आगंतूणं गय-पूरम्मि, तियचच्चरेसु लोयाणं ।
साहेइ इहं लोए, दीवोदहिणो परं सत्त ॥८७८४॥
तत्तो परेण लोगो, वोच्छिन्नो एवमऽमलनाणेण ॥
जाणामि पासामि य, करयलठियकुवलयफलं व ॥८७८५॥
तम्मि य समए सामी, समोसढो तत्थ चेव वीरजिणो ।
भिक्खऽट्ठं च पविट्ठो, गोयमसामी व नयरम्मि ॥८७८६॥
अह सत्तोयहिदीव-प्पणयमऽऽयन्निऊण लोगाओ ।
विम्हियमणो नियत्तिय, समुचियसमयम्मि जयनाहं ॥८७८७॥
पुच्छेइ गोयमो नाह ! केत्तिया एत्थ दीवजलनिहिणो ।
जयगुरुणा संलत्तं, अस्संखा सिंधुदीव त्ति ॥८७८८॥
एवं जिणप्पणीयं, लोगाओ निसामिउं सिवो सहसा ।
संकाकंखो-वहओ, जावऽच्छइ ताव विब्भंग ॥८७८९॥
परिवडिय से खिप्पं, ताहे अच्चंतभत्तिभरभरिओ ।
सम्मनाणनिमित्तं, आगंतु वंदए वीरं ॥८७९०॥
सिरविरइयकरकमलो, ठाउं संन्निहियभूमिभागे य ।
जिणवयणनिहियचक्खू, उज्जुत्तो पज्जुवासेइ ॥८७९१॥
अह तियसतिरियनरसंकुलाए, परिसाए तस्स य जिणिंदो ।
लोगसरुवं सासइ, सवित्थरं धम्मसारं च ॥८७९२॥
तं च निसामिय सम्मं,पडिबुद्धो जिणवरस्स पासम्मि ।
पव्वज्जं पडिवज्जइ, स महप्पा कयतवच्चरणो ॥८७९३॥
कम्मट्ठगंठिमऽतिनिट्ठुरं वि, लीलाए निट्ठवेऊण ।
अरुयमऽजम्ममऽमरणं, सिवमऽक्खयसोक्खमऽणुपत्तो ॥८७९४॥
इय मुनियजगसरुवो, निस्संगो पत्थुयऽत्थसिद्धिकए ।
खवग ! मणागं पि मणो-ऽणिजंतियं मा धरेज्जासु ॥८७९५॥
जहठियलोगसरुवं, वियाणमाणो य पयहिय पमायं ।
बोहिए दुल्लहत्तं परम भावेसु खवग ! जहा ॥८७९६॥

("संवेग रंगशाळा" मे से साभार)

२४. ॥ अथ एकादशमी भावना (गेयाष्टकम्) ॥

(काफी रागेण गीयते)
(राग - आज सखी मनमोहन ए देशी...)

विनय विभावय शाश्वतं हृदि लोकाकाशम् ।
सकलचराचरधारणे परिणमदवकाशम् ॥ विनय...१॥
लसदलोकपरिवेष्टितं गणनातिगमानम् ।
पञ्चभिरपि धर्मादिभिः सुघटितसीमानम् ॥ विनय...२॥
समवघातसमये जिनैः परिपूरितदेहम् ।
असुमदणुकविविधक्रियागुणगौरवगेहम् ॥ विनय...३॥
एकरूपमपि पुद्गलैः कृतविविधविवर्तम् ।
काञ्चनशैलशिखरोन्नतं क्वचिदवनतगर्त्तम् ॥ विनय...४॥
क्वचन तविषमणिमन्दिरैरुदितोदितरूपम् ।
घोरतिमिरनरकादिभिः क्वचनातिविरूपम् ॥ विनय...५॥
क्वचित् उत्सवमयुज्वलं जयमंगलनादम् ।
क्वचितमन्दहाहारवं पृथुशोकविषादम् ॥ विनय...६॥
बहुपरिचितमनन्तशो निखिलैरपि सत्त्वैः ।
जन्ममरणपरिवत्तिभिः कृतमुक्तममत्त्वैः ॥ विनय...७॥
इह पर्यटनपरांमुखाः प्रणमत भगवन्तम् ।
शान्तसुधारसपानतो घृतविनयमवन्तम् ॥ विनय...८॥

(इति श्री शान्तसुधारसगेय-काव्ये लोकस्वरूपभावनाविभावनो नाम
एकादशः प्रकाशः महामहोपाध्याय श्री विनयविजयजी कृत...)

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना
ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE
सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY(सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

(PART - 1 To 5)

ग्रन्थ का विशेषार्थ समाप्त हुआ। भव्य जीवगण इस ग्रन्थ का अभ्यास कर श्री जिनेश्वर - सर्वज्ञ भगवान् की आज्ञा का सम्यक् श्रद्धान कर, सम्यग् आचार विचार रूप सम्यक् चारित्र का पालन कर मुक्ति पद को प्राप्त करे। एवं मति दोष से, लेखन दोष से अथवा प्रेस दोष से हुई भूलचूक के लिये मिथ्या-दुष्कृत (मिच्छामि दुक्कडम्) देते हैं। गंभीर हृदयवाले सज्जनवर्ग मेरे जैसे कृपा पात्र अर्थ लेखन के प्रति क्षमा रखकर सुधारकर पढ़ने की कृपा करे।

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना

ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE

सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

PART - 5

JAIN COSMOLOGY(सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति

❀ पावन प्रेरणा ❀

प. पू. दीक्षा दानेश्वरी आ. श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा.

प. पू. प्रवचन प्रभावक आ. श्री रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा.

THE REAL UNIVERSE सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड PART - 1
THE REAL UNIVERSE सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड PART - 2
THE REAL UNIVERSE सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड PART - 3
THE REAL UNIVERSE सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड PART - 4

Printed By
NAVRANG
9428 500 401

Design By
Omkargraphics
9408031622